TOPIC:-*RESEARCH METHODS.*

PAPER NAME: - DISSERTATION.

SUBJECT: - GEOGRAPHY

SEMESTER: - M.A. –IV.

PAPER CODE: - (GEOG. 404)

UNIVERSITY DEPARTMENT OF GEOGRAPHY,

DR. SHYMA PRASAD MUKHERJEE UNIVERSITY,

RANCHI.

खण्ड- परिचय -2 : अनुसन्धान के प्रकार

खण्ड-2 में अनुसन्धानों के विभिन्न प्रकारों को चार इकाइयों में स्पष्ट किया गया है। इकाई-05 में ऐतिहासिक अनुसन्धान, इकाई-06 में वर्णनात्मक अनुसन्धान, इकाई-07 में प्रयोगात्मक अनुसन्धान तथा इकाई-08 में गुणात्मक अनुसन्धान की चर्चा की गई है।

ऐतिहासिक अनुसन्धान में ऐतिहासिक समस्याओं का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। इस अनुसन्धान का मूल उद्देश्य अतीत के आधार पर वर्तमान को समझना तथा तदनुसार भविष्य को बनाना होता है। ऐतिहासिक अनुसन्धान में ऐतिहासिक साक्ष्यों की आवश्यकता पड़ती है, जो मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं - प्राथमिक स्रोत एवं गौण स्रोत। इस खण्ड की पंचन इकाई में ऐतिहासिक अनुसन्धान के उद्देश्य, पद, स्रोत क्षेत्र एवं महत्व आदि का विवेचन किया गया है।

इस खण्ड की षष्ठ इकाई में वर्णनात्मक अनुसन्धान के अर्थ, उद्देश्य, पद एवं विभिन्न प्रकारों की चर्चा की गयी है। वर्णनात्मक अनुसन्धान में वर्तमान घटनाक्रमों का अध्ययन किया जाता है। वर्णनात्मक अनुसन्धान को तीन भागों में बाँटा जा सकता है- सर्वेक्षण अध्ययन, अन्तर सम्बन्धों का अध्ययन तथा विकासात्मक अध्ययन।

प्रयोगात्मक अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि है। इस प्रकार के अनुसन्धान में कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में नियन्त्रण, जोड़-तोड़, अवलोकन तथा पुनरावृत्ति प्रमुख विशेषतायें होती हैं। इस प्रकार के अनुसन्धान में प्रायोगिक अभिकल्प का चुनाव एक महत्वपूर्ण कार्य होता है। खण्ड-2 की सप्तम इकाई में प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषतायें, उनमें प्रयुक्त होने वाले चर, विभिन्न प्रकार के अभिकल्प, अभिकल्प चयन की कसौटियों आदि का वर्णन किया गया है।

इस खण्ड की अष्टम इकाई में गुणात्मक अनुसन्धान का अर्थ, विशेषतायें, उद्देश्य, प्रसंग, महत्व प्रदत्त संग्रह के उपकरण एवं गुणात्मक प्रदत्त विश्लेषण की तकनीकों की विवेचना की गई है। गुणात्मक अनुसन्धान के लिये विभिन्न पदों का प्रयोग किया जाता है, जैसे-नृ-शास्त्र शोध, व्यक्ति अध्ययन शोध, घटना-क्रिया विज्ञान पर शोध, संरचनावाद तथा सहभागी प्रेक्षण आदि। यह गहनतापूर्वक किया जाने वाला एक ऐसा व्यवस्थित प्रक्रियाओं वाला अनुसन्धान है जिसमें गुणात्मक प्रदत्त संकलन की विधियों का प्रयोग क परिकल्पनात्मक निष्कर्षों को मात्रात्मक या गुणात्मक रूप में प्राप्त किया जाता है तथा जिसका सम्बन्ध वर्तमान गोचर से होता है।

bdkbl &05 ,frgkfld vuqlU/kku fof/k

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 ऐतिहासिक अनुसन्धान के उद्देश्य

5.3.1 ऐतिहासिक अनुसन्धान के पद

5.3.2 ऐतिहासिक साक्ष्यों के स्रोत

5.3.3 प्राथमिक स्रोत

5.3.4 गौण स्रोत

5.4 ऐतिहासिक साक्ष्यों की आलोचना

(i) वाहय आलोचना

(ii) आन्तरिक आलोचना

5.5 ऐतिहासिक अनुसन्धान का क्षेत्र

5.6 ऐतिहासिक अनुसन्धान का महत्व

5.6.1 अतीत के आधार पर वर्तमान का ज्ञान

5.6.2 पारिवर्तन की प्रकृति को समझने में सहायक

5.6.3 अतीत के प्रभाव का मूल्यांकन

5.6.4 व्यवहारिक उपयोगिता

5.7 ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमायें और समस्यायें

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

व्यापक एवं अपेक्षाकृत सामान्य पक्षों को दृष्टिगत रखकर ऐतिहासिक मानव जाति के अतीत का विश्वसनीय एवं अर्थपूर्ण अभिलेख है। सुदृढ़ एवं निकट अतीत के संदर्भ में शैक्षिक घटनाओं, संगठनों एवं आन्दोलनों की व्याख्या हेतु ऐतिहासिक विधि के उपयोग में सत्यों एवं सामान्यीकरण तक पहुचने के लिए एक विशेष प्रकार की प्रणाली को जन्म दिया । यह विधि अपने स्वरूप एवं प्रक्रियात्मक विलक्षणताओं के कारण अन्य सभी विधियों से भिन्नता रखती है। इसके तहत जिन सत्यों/तथ्यों का अन्वेषण मुख्य मुददा होता है वे अतीत से जुड़े होने के कारण अत्यन्त अमूर्त एवं चुनौती पूर्ण संदर्भ प्रस्तुत करते हैं। ऐतिहासिक विधि के सफल अनुप्रयोग में शोधकर्ता की कल्पनाशीलता तथा धैर्य विशेष रूप से महत्वपूर्ण हेाती

है। वैसे तो जीवन्त गोचर के रूप में घटनायें हमारी आंखों के सामने घटित होती है लेकिन उनके बारे में हमारा बोध एवं विशुद्ध रूप में व्याख्या कर सकने की सम्भावना पर्याप्त जोखिम पूर्ण रहती है। यह व्याख्या ऐतिहासिक अनुसन्धान में अत्यन्त सरल तथ्यों के आधार पर सम्भावित की जाती है। इस इकाई में हम लोग ऐतिहासिक अनुसन्धान के उद्देश्य, प्रक्रिया, क्षेत्र, महत्व, सीमायें एवं समस्यायें आदि का अध्ययन करेंगें।

5.2 उददेश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप–

1. ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि के बारे में जान सकेंगे।
2. ऐतिहासिक अनुसन्धान के विभिन्न पदों से अवगत हो सकेंगे।
3. ऐतिहासिक अनुसन्धान के क्षेत्र को बता सकेंगे।
4. ऐतिहासिक अनुसन्धान के महत्व को जान सकेंगें।
5. ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमायें और समस्याओं को समझ सकेंगे।

ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि

ऐतिहासिक अनुसन्धान का सम्बन्ध भूतकाल से हैं। यह भविष्य को समझने के लिये भूत का विश्लेषण करता है।

जॉन डब्ल्यू बेस्ट के अनुसार ''ऐतिहासिक अनुसन्धान का सम्बन्ध ऐतिहासिक समस्याओं के वैज्ञानिक विश्लेषण से है। इसके विभिन्न पद भूत के सम्बन्ध में एक नयी सूझ पैदा करते है, जिसका सम्बन्ध वर्तमान और भविष्य से होता है।''

करलिंगर के अनुसार, '' ऐतिहासिक अनुसन्धान का तर्क संगत अन्वेषण है। इसके द्वारा अतीत की सूचनाओं एवं सूचना सूत्रों के सम्बन्ध में प्रमाणों की वैधता का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया जाता है और परीक्षा किये गये प्रमाणों की सावधानीपूर्वक व्याख्या की जाती है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम ऐतिहासिक अनुसन्धान को निम्न प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं –

''ऐतिहासिक अनुसन्धान अतीत की घटनाओं, विकास क्रमों तथा विगत अनुभूतियों का वैज्ञानिक अध्ययन या अन्वेषण है। इसके अन्तर्गत उन बातों या नियमों की खोज की जाती है जिन्होंने वर्तमान को एक विशेष रूप प्रदान किया है।''

5.3 ऐतिहासिक अनुसन्धान के उद्देश्य

1. ऐतिहासिक अनुसन्धान का मूल उद्देश्य भूत के आधार पर वर्तमान को समझना एवं भविष्य के लिये सतर्क होना है।

2. ऐतिहासिक अनुसन्धान का उद्देश्य अतीत, वर्तमान और भविष्य के सम्बन्ध स्थापित कर वैज्ञानिकों की जिज्ञासा को शान्त करना है।

3. ऐतिहासिक अनुसन्धान का उद्देश्य अतीत के परिपेक्ष्य में वर्तमान घटनाक्रमों का अध्ययन कर भविष्य में इनकी सार्थकता को ज्ञात करना है।

5.3.1 ऐतिहासिक अनुसन्धान के पद

ऐतिहासिक अनुसन्धान जब वैज्ञानिक विधि द्वारा किया जाता है तो उसमें निम्नलिखित पद सम्मिलित होते हैं –

1. समस्या का चुनाव और समस्या का सीमा निर्धारण।
2. परिकल्पना या परिकल्पनाओं का निर्माण।
3. तथ्यों का संग्रह और संग्रहित तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच।
4. तथ्य विश्लेषण के आधार पर परिकल्पनाओं की जाँच।
5. परिणामों की व्याख्या और विवेचना।

5.3.2 ऐतिहासिक साक्ष्यों के स्रोत

ऐतिहासिक साक्ष्यों के स्रोत मुख्यतः दो श्रेणियों में वर्गीकृत किये जाते है–

1. प्राथमिक स्रोत
2. गौण स्रोत

1. **प्राथमिक स्रोत** :– जब कोई अनुसन्धानकर्ता अध्ययन क्षेत्र में जाकर अध्ययन इकाईयों से स्वयं या अपने सहयोगी अनुसन्धानकर्ताओं के द्वारा सम्पर्क करके तथ्यों का संकलन करता है तो यह तथ्य संकलन का प्राथमिक स्रोत कहलाता है।

मौलिक अभिलेख जो किसी घटना या तथ्य के प्रथम साक्षी होते हैं 'प्राथमिक स्रोत' कहलाते हैं। ये किसी भी ऐतिहासिक अनुसन्धान के ठोस आधार होते हैं।

प्राथमिक स्रोत किसी एक महत्वपूर्ण अवसर का मौलिक अभिलेख होता है, या एक प्रत्यक्षदर्शी द्वारा एक घटना का विवरण होता है या फिर किसी किसी संगठन की बैठक का विस्तृत विवरण होता है।

प्राथमिक स्रोत के उदाहरण – न्यायालयों के निर्णय, अधिकार पत्र, अनुमति पत्र, घोषणा पत्र, आत्म चरित्र वर्णन, दैनन्दिनी, कार्यालय सम्बन्धी अभिलेख, इश्तिहार, विज्ञापन पत्र, रसीदें, समाचार पत्र एवं पत्रिकायें आदि।

2. गौण स्रोत :– जब साक्ष्यो के प्रमुख स्रोत उपलब्ध नहीं होते है तब कुछ ऐतिहासिक अनुसन्धान अध्ययनों को आरम्भ करने एवं विधिवत ढ़ंग से कार्य करने के लिये इन साक्ष्यों की आवश्यकता होती है।

गौण स्रोत का लेखक घटना के समय उपस्थित नहीं होता है बल्कि वह केवल जो व्यक्ति वहाँ उपस्थित थे, उन्होनें क्या कहा? या क्या लिखा ? इसका उल्लेख व विवेचन करता है।

एक व्यक्ति जो ऐतिहासिक तथ्य के विषय में तात्कालिक घटना से सम्बन्धित व्यक्ति के मुँह से सुने–सुनाये वर्णन को अपने शब्दों में व्यक्त करता है ऐसे वर्णन को गौण स्रोत कहा जायेगा। इनमें यद्यपि सत्य का अंश रहता है किन्तु प्रथम साक्षी से द्वितीय श्रोता तक पहुॅचते –पहुॅचते वास्तविकता में कुछ परिवर्तन आ जाता है जिससे उसके दोषयुक्त होने की सम्भावना रहती है।

अधिकांश ऐतिहासिक पुस्तकें और विधाचक्रकोश गौण स्रोतों का उदाहरण है।

बोध प्रश्न –

1. ऐतिहासिक साक्ष्यों के दो स्रोत के नाम लिखिए ।

.....

.....

2. प्राथमिक स्रोत से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

5.4 ऐतिहासिक साक्ष्यों आलोचना (Critisimin of Historical)

ऐतिहासिक विधि में हम निरीक्षण की प्रत्यक्ष विधि का प्रयोग नहीं कर सकते हैं क्योंकि जो हो चुका उसे दोहराया नही जा सकता है। अतः हमें साक्ष्यों पर निर्भर होना पड़ता है। ऐतिहासिक अनुसन्धान में साक्ष्यों के संग्रह के साथ उसकी आलोचना या मूल्यांकन भी आवश्यक होता है जिससे यह पता चले कि किसे तथ्य माना जाये, किसे सम्भावित माना जाये और किस साक्ष्य को भ्रमपूर्ण माना जाये इस दृष्टि से हमें ऐतिहासिक विधि में साक्ष्यों की आलोचना या मूल्यांकन की आवश्यकता हेाती है। अतः साक्ष्यों की आलोचना का मूल्यांकन स्रेात की सत्यता की पुष्टि तथा इसके तथ्यों की प्रामाणिकता की दोहरी विधि से सम्बन्धित है। ये क्रमशः (1). वाह्य आलोचना और (2) आन्तरिक आलोचना कहलाती है।

(1) वाह्य आलोचना (External Critiscism) :– वाह्य आलोचना का उद्देश्य साक्ष्यों के स्रोत की सत्यता की परख करना होता है कि आँकड़ों का स्रोत विश्वसनीय है या नहीं। इसका सम्बन्ध साक्ष्यों की मौलिकता निश्चित करने से है। वाह्य आलोचना के अंतर्गत साक्ष्यों के रूप, रंग, समय, स्थान तथा परिणाम की दृष्टि से यथार्थता की जाँच करते हैं। हम इसके अन्तर्गत यह देखते हैं कि जब साक्ष्य लिखा गया, जिस स्याही से लिखा गया, लिखने में जिस शैली का प्रयोग किया गया या जिस प्रकार की भाषा, लिपि, हस्ताक्षर आदि प्रयुक्त हुए है, वे सभी तथ्य मौलिक घटना के समय उपस्थित थे या नहीं। यदि उपस्थित नही

थे, तो साक्ष्य नकली माना जायेगा।

उपरोक्त बातों के परीक्षण के लिये हम निम्न प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करते हैं –

1. लेखक कौन था तथा उसका चरित्र व व्यक्तित्व कैसा था ?
2. लेखक की सामान्य रिपोर्टर के रूप में योग्यता क्या पर्याप्त थी ?
3. सम्बन्धित घटना में उसकी रूचि कैसी थी ?
4. घटना का निरीक्षण उसने किस मनस्थिति से किया ?
5. घटना के कितने समय बाद प्रमाण लिखा गया ?
6. प्रमाण किसी प्रकार लिखा गया – स्मरण द्वारा, परामर्श द्वारा, देखकर या पूर्व–ड्राफ्टों को मिलाकर ?
7. लिखित प्रमाण अन्य प्रमाणों से कहाँ तक मिलता है ?

(2) **आन्तरिक आलोचना** – आन्तरिक आलोचना के अन्तर्गत हम स्रोत में निहित तथ्य या सूचना का मूल्यॉकन करते हैं। आन्तरिक आलोचना का उद्देश्य साक्ष्य ऑकड़ों की सत्यता या महत्व को सुनिश्चित करना होता है। अतः आन्तरिक आलोचना के अन्तर्गत हम विषय वस्तु की प्रमाणिकता व सत्यता की परख करते हैं। इसके लिये हम निम्न प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

1. क्या लेखक ने वर्णित घटना स्वयं देखी थी ?
2. क्या लेखक घटना के विश्वसनीय निरीक्षण हेतु सक्षम था ?
3. घटना के कितने दिन बाद लेखक ने उसे लिखा ?
4. क्या लेखक ऐसी स्थिति में तो नहीं था जिसमें उसे सत्य को छिपाना पड़ा हो ?
5. क्या लेखक धर्मिक, राजनैतिक, व जातीय पूर्व–धारणा से तो प्रभावित नहीं था ?
6. उसके लेख व अन्य लेखों में कितनी समानता है ?
7. क्या लेखक को तथ्य की जानकारी हेतु पर्याप्त अवसर मिला था ?
8. क्या लेखक ने साहित्य प्रवाह में सत्य को छिपाया तो नहीं है ?

इन प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर ऐतिहासिक ऑकड़ो की आन्तरिक आलोचना के पश्चात ही अनुसन्धानकर्ता किसी निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करता है।

5.5 ऐतिहासिक अनुसन्धान का क्षेत्र

वैसे तो ऐतिहासिक अनुसन्धान का क्षेत्र बहुत व्यापक है किन्तु संक्षेप में इसके क्षेत्र में निम्नलिखित को सम्मिलित कर सकते हैं –

1. बड़े शिक्षा शास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों के विचार ।
2. संस्थाओं द्वारा किये गये कार्य।
3. विभिन्न कालों में शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक विचारों के विकास की स्थिति।
4. एक विशेष प्रकार की विचारधारा का प्रभाव एव उसके स्रोत का अध्ययन।
5. शिक्षा के लिये संवैधानिक व्यवस्था का अध्ययन।

5.6 ऐतिहासिक अनुसन्धान का महत्व

जब कोई अनुसन्धानकर्ता अपनी अनुसन्धान समस्या का अध्ययन अतीत की घटनाओं के आधार पर करके यह जानना चाहता है कि समस्या का विकास किस प्रकार और क्यों हुआ है ? तब ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक अनुसन्धान के महत्व को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं –

5.6.1 अतीत के आधार पर वर्तमान का ज्ञान –

ऐतिहासिक अनुसन्धान के आधार पर सामाजिक मूल्यों, अभिवृत्तियों और व्यवहार प्रतिमानों का अध्ययन करके यह ज्ञात किया जा सकता है कि इनसे सम्बन्धित समस्यों अतीत से किस प्रकार जुड़ी है तथा यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि इनसे सम्बन्धित समस्याओं का विकास कैसे–कैसे और क्यों हुआ था ?

5.6.2 परिवर्तन की प्रकृति के समझने में सहायक –

समाजशास्त्र और समाज मनोविज्ञान में अनेक ऐसी समस्यायें हैं जिनमें परिवर्तन की प्रकृति को समझना आवश्यक होता है। जैसे सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन, औद्योगीकरण, नगरीकरण से सम्बन्धित समस्याओं की प्रकृति की विशेष रूप से परिवर्तन की प्रकृति को ऐतिहासिक अनुसन्धान के प्रयोग द्वारा ही समझा जा सकता है।

5.6.3 अतीत के प्रभाव का मूल्यांकन –

व्यवहारपरक विज्ञानों में व्यवहार से सम्बन्धित अनेक ऐसी समस्यायें हैं जिनका क्रमिक विकास हुआ है। इन समस्याओं के वर्तमान स्वरूप पर अतीत का क्या प्रभाव पड़ा है ? इसका अध्ययन ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि द्वारा ही किया जा सकता है।

5.6.4 व्यवहारिक उपयोगिता –

यदि कोई अनुसन्धानकर्ता सामाजिक जीवन में सुधार से सम्बन्धित कोई कार्यक्रम या योजना लागू करना चाहता है तो वह ऐसी समस्याओं का ऐतिहासिक अनुसन्धान के आधार पर अध्ययन कर अतीत में की गयी गलतियों को सुधारा जा सकता है और वर्तमान में सुधार कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी ढ़ंग से लागू करने का प्रयास कर सकता है।

5.7 ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमायें और समस्यायें

वर्तमान वैज्ञानिक युग में ऐतिहासिक अनसुन्धान का महत्व सीमित ही है। आधुनिक युग में किसी समस्या के अध्ययन में कार्यकारण सम्बन्ध पर अधिक जोर दिया जाता है जिसका अध्ययन ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि द्वारा अधिक सशक्त ढ़ंग से नहीं किया जा सकता है केवल इसके द्वारा समस्या के संदर्भ में तथ्य एकत्रित करके कुछ विवेचना ही की जा सकती है। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमाओं को निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं–

1. **बिखरे तथ्य –** यह ऐतिहासिक अनुसन्धान की एक बड़ी समस्या है कि समस्या से सम्बन्धित साक्ष्य या तथ्य एक स्थान पर प्राप्त नहीं होते हैं इसके लिये अनुसन्धानकर्ता को दर्जनों संस्थाओं और पुस्तकालयों में जाना पड़ता है। कभी–कभी समस्या से सम्बन्धित पुस्तकें, लेख, शोधपत्र–पत्रिकायें, बहुत पुरानी होने पर इसके कुछ भाग नष्ट हो जाने के कारण ये सभी आंशिक रूप से ही उपलब्ध हो पाते हैं ।

2. **प्रलेखों का त्रुटिपूर्ण रखरखाव –** पुस्तकालयों तथा अनेक संस्थाओं में कभी प्रलेख क्रम में नही होते है तो कभी प्रलेख दीमक व चूहो के कारण कटे–फटे मिलते हैं ऐसे में ऐतिहासिक अनुसन्धानकर्ता को बहुत कठिनाई होती है।

3. **वस्तुनिष्ठता की समस्या –** ऐतिहासिक अनुसन्धान में तथ्यों और साक्ष्यों, का संग्रह अध्ययनकर्ता के पक्षपातों, अभिवृत्तियों, मतों और व्यक्तिगत विचारधाराओं से प्रभावित हो जाता है जिससे परिणामों की विश्वसनीयता और वैधता संदेह के घेरे में रहती है।

4. **सीमित उपयोग –** ऐतिहासिक अनुसन्धान का प्रयोग उन्हीं समस्याओं के अध्ययन मे हो सकता है जिनके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित प्रलेख, पाण्डुलिपियाँ अथवा ऑकड़ो, या तथ्यों से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध हो। अन्यथा की स्थिति में ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि का प्रयोग सम्भव नहीं हो पाता है।

बोध प्रश्न –

1. ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमाओ के नाम लिखिये ।

.....

.....

.....

.....

.....

5.8 अभ्यास प्रश्न

प्र0– ऐतिहासिक अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं ? ऐतिहासिक अनुसन्धान के पद को स्पष्ट कीजिए ।

प्र0– ऐतिहासिक साक्ष्यों के स्रोत की विवेचना कीजिए।

प्र0– प्राथमिक स्रोत एवं गौण स्रोत के अनतर को स्पष्ट कीजिए।

प्र0– ऐतिहासिक अनुसन्धान के क्षेत्र को बताइयें।

प्र0– ऐतिहासिक अनुसन्धान की उपयोगिता क्या है ?

प्र0– ऐतिहासिक आलोचना की विवेचना कीजिए।

प्र0– ऐतिहासिक अनुसन्धान की सीमाएं और समस्याएं समझायें।

5.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बेस्ट, जॉन डब्लू : रिसर्च इन एजूकेशन, इन्गलवुड क्लिफ, एन0जे0, प्रिन्टिस हाल, नई दिल्ली, 1997।

सिंह, अरूण कुमार : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली– 2007।

कौल, लोकेश : शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, 2005।

भटनागर, आर0पी0 : शिक्षा अनुसन्धान, लायल बुक डिपो, मेरठ, 2003।

राय, पारसनाथ : अनुसंधान परिचय, नवरंग ऑफसेट प्रिन्टर्स, आगरा, 2002 ।

इकाई –06 वर्णनात्मक अनुसंधान

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 वर्णनात्मक अनुसन्धान

6.4 वर्णनात्मक अनुसन्धान के उद्देश्य

6.5 वर्णनात्मक अनुसन्धान के पद

6.6 वर्णनात्मक अनुसन्धान के प्रकार

6.7 सर्वेक्षण अध्ययन के प्रकार

6.8 अन्तर सम्बन्धों का अध्ययन

6.9 विकासात्मक अध्ययन

6.10 अभ्यास प्रश्न

6.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

शैक्षिक शोध के अन्तर्गत वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का बहुतायत से प्रयोग होता है। इसे मानवीय सर्वेक्षण के नाम से भी पुकारा जाता है। इनका प्रमुख मुद्दा वर्तमान घटनाक्रमों का अध्ययन करना है। अर्थात वर्तमान घटनाक्रमों के विभिन्न पक्षों का विवरण देना इस प्रकार के शोधों को पूरा करने का निहित उद्देश्य है। उपलब्ध परिस्थितियों या दशाओं की प्रकृति का पता लगाना या वर्तमान परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से मानकों को निश्चित करना या विशेष प्रकार की घटनाओं, गोचरों के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों को निर्धारित करना इस विधि ा के क्षेत्र में ही आता है। इस विधि में यह ध्यान देना होगा कि वर्णनात्मक सर्वेक्षण की विधि अपनी जटिलता की स्तर की दृष्टि से अन्य शोध विधियों से भिन्नता रखती है तथा इसके तहत साधारण आवृत्ति या परिगणना से लेकर अत्यन्त अर्न्तनिहित सम्बन्धात्मक विश्लेषणों से युक्त अध्ययन सम्पन्न होते है। इस विधि का अनुप्रयोग ऐसी परिस्थिति में किया जाता है जिसमें समस्या समाधान प्राप्त करना मुख्य ध्येय हेाता है। इस इकाई के अन्तर्गत वर्णनात्मक अनुसन्धान की प्रक्रिया उद्देश्य, प्रकार एवं अन्तर सम्बन्धों आदि का अध्ययन किया जा सकेगा।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से अधिगमकर्त्ता

1. वर्णनात्मक अनुसन्धान उद्देश्य के बारे में जान सकेंगे।
2. वर्णनात्मक अनुसन्धान के विभिन्न पदों से अवगत हो सकेंगे।

3. वर्णनात्मक अनुसन्धान के प्रकार को बता सकेंगे।

4. अन्तर सम्बन्धों के अध्ययन को समझ सकेंगे।

6.3 वर्णनात्मक अनुसन्धान

शिक्षा तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र में वर्णनात्मक अनुसन्धान का महत्व बहुत अधिक है इस विधि का प्रयोग शिक्षा व मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यापक रूप से होता है।

जॉन डब्ल्यू बेस्ट के अनुसार ''वर्णनात्मक अनुसन्धान 'क्या है' का वर्णन एवं विश्लेषण करता है। परिस्थितियाँ अथवा सम्बन्ध जो वास्तव में वर्तमान है, अभ्यास जो चालू है, विश्वास, विचारधारा अथवा अभिवृत्तियाँ जो पायी जा रहीं है, प्रक्रियायें जो चल रही है, अनुभव जो प्राप्त किये जा रहे हैं अथवा नयी दिशायें जो विकसित हो रही है, उन्हीं से इसका सम्बन्ध है।''

वर्णनात्मक अनुसन्धान का प्रयोग निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने में होता है– वर्तमान स्थिति क्या है ? इस विषय की वर्तमान स्थिति क्या है?

वर्णनात्मक अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य वर्तमान दशाओं, क्रियाओं, अभिवृत्तियों तथा स्थिति के विषय को ज्ञान प्राप्त करना है। वर्णनात्मक अनुसन्धानकर्ता समस्या से सम्बन्धित केवल तथ्यों को एकत्र ही नहीं करता है बल्कि वह समस्या से सम्बन्धित विभिन्न चरों में आपसी सम्बन्ध ढूँढ़ने का प्रयास करता है साथ ही भविष्यवाणी भी करता है।

6.4 वर्णनात्मक अनुसन्धान के उद्देश्य

1. वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करना तथा भावी नियोजन एवं सम्बन्धित परिवर्तन में सहायता करना।

2. भावी अनुसन्धान के प्राथमिक अध्ययन में सहायता करना जिससे अनुसन्धान को अधिक नियंत्रित, वस्तुनिष्ठ एवं प्रभावी बनाया जा सके।

6.5 वर्णनात्मक अनुसन्धान के पद

डेविड फोक्स के अनुसार वर्णनात्मक अनुसन्धान के निम्न लिखित पद है :

1. अनुसन्धान–समस्या के कथन को स्पष्ट करना।

2. यह सुनिश्चित करना कि समस्या सर्वेक्षण अनुसन्धान के उपयुक्त है।

3. उचित प्रकार की सर्वेक्षण विधि का चुनाव करना।

4. उद्देश्यों को निर्धारित करना।

5. यह सुनिश्चित करना कि –

    1. ऑकड़े प्राप्त करने के उपकरण उपलब्ध है।

2. यह उपकरण समय पर तैयार या उपलब्ध हो सकते हैं।
3. यह उपकरण न तो है और न ही तैयार किये जा सकते हैं।

6. प्रस्तावित सर्वेक्षण की सफलता का पूर्वानुमान लगाना।
7. अनुसन्धान के प्रतिनिधिकारी न्यायदर्श का चुनाव करना।
8. न्यायदर्श, उपकरण आदि को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण की सफलता का अन्तिम पूर्वानुमान लगाना।
9. ऑकड़े प्राप्त करने का अभिकल्प तैयार करना।
10. आँकड़ें का संग्रह करना।
11. आँकड़ों का विश्लेषण करना।
12. प्रतिवेदन तैयार करना –
    1. वर्णनात्मक पक्ष
    2. तुलनात्मक अथवा मूल्यांकन पक्ष
    3. निष्कर्ष।

6.6 वर्णनात्मक अनुसन्धान के प्रकार

विभिन्न लेखकों ने वर्णनात्मक अनुसन्धान को कई प्रकार से वर्गीकृत करने का प्रयास किया है जिसमें वान डैलेन द्वारा दिया गया वर्गीकरण अधिक मान्य है उनके अनुसार वर्णनात्मक अनुसन्धान को निम्नलिखित 3 मुख्य भागों में बॉटा गया है :–

1. सर्वेक्षण अध्ययन
2. अन्तर सम्बन्धों का अध्ययन
3. विकासात्मक अध्ययन

1. सर्वेक्षण अध्ययन– शब्द सर्वेक्षण (Servey) की उत्पत्ति शब्दों 'Sur' या 'Sor' तथा Veeir या 'Veior' से हुई है जिसका अर्थ क्रमशः 'ऊपर से' और 'देखना' होता है। सामान्यतः सर्वेक्षण 'वर्तमान में क्या रूप है?' इससे सम्बन्धित है वर्तमान में क्या स्वरूप है ? इसकी व्याख्या एवं विवेचना करता है इसका सम्बन्ध परिस्थितियां या सम्बन्ध जो वास्तव में वर्तमान है, कार्य जो रहा है प्रक्रिया जो चल रही है, से होता है।

सर्वेक्षण अध्ययन के द्वारा हम तीन प्रकार की सूचनाएं प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

1. वर्तमान स्थिति क्या है ? अथवा वर्तमान स्तर का निर्धारण,
2. हम क्या चाहते हैं? अथवा वर्तमान स्तर और मान्य स्तर में तुलना,
3. हम उन्हें कैसे प्राप्त कर सकते हैं ? अथवा वर्तमान स्तर का विकास करना।

6.7 सर्वेक्षण अध्ययन के प्रकार

सर्वेक्षण अध्ययन अनेक प्रकार का हो सकता है जिनके मुख्य प्रकार निम्नलिखित है :–

1. विद्यालय सर्वेक्षण
2. कार्य विश्लेषण
3. प्रलेखी विश्लेषण
4. जनमत सर्वेक्षण
5. समुदाय सर्वेक्षण

1. विद्यालय सर्वेक्षण – इसके अन्तर्गत प्राप्त सूचना के आधार पर विद्यालयों की क्षमता और प्रभावशीलता का विकास करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण में निम्नलिखित प्रमुख उपकरणों का प्रयोग किया जाता है–

1. निरीक्षण 2. प्रश्नावली 3. साक्षात्कार
4. मानक परीक्षण 5. प्राप्तांक पत्र 6. मूल्यांकन मापदण्ड

इनसे प्राप्त ऑकड़ो के आधार पर अनेक प्रशासकीय, आर्थिक तथा पाठ्यक्रम सम्बन्धी सुधार किये जाते हैं ।

2. कार्य विश्लेषण :– कार्य विश्लेषण द्वारा :

1. कार्यकर्ताओं की कार्य–पद्धति, कमजोरियों व अक्षमताओं को पहचाना जाता है।
2. मानवशक्ति के सर्वोत्तम सदुपयोग की दृष्टि से कार्य–वितरण समुचित ढ़ंग से किया जाता है।
3. विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्व तथा कौशल हेतु वेतन तथा भत्ते को निर्धारण किया जाता है।
4. सेवाकालीन एवं भावी कार्यकर्ताओं के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम व शैक्षिक सामग्री का निर्माण किया जाता है।
5. प्रशासनिक संगठन व क्रिया के बेहतर संचालन के लिये आवश्यक रूप रेखा का निर्माण किया जाता है।

अतः कार्य–विश्लेषण द्वारा कार्यकर्ताओं की सेवाओ में उनकी वर्तमान स्थिति को तथा उनकी कमजोरियों को जानकर उसे सुधारने का प्रयास किया जाता है।

3. प्रलेखी विश्लेषण – प्रलेखी विश्लेषण अनुसन्धानकर्ता के लिये ऑकड़े प्राप्त करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसे कभी–कभी विषय वस्तु विश्लेषण, क्रिया अथवा सूचनात्मक विश्लेषण भी कहा जाता है।

प्रलेखी विश्लेषण के अंतर्गत भूतकालीन व वर्तमान अभिलेखों का विश्लेषण

किया जाता है। यह प्रलेख लेख, कहानी, उपन्यास, कविता, टी0वी0कथानक आदि कुछ भी हो सकता है।

प्रलेखी विश्लेषण के द्वारा व्यक्तियों की मनोवैज्ञानिक दशाओं, मूल्यों, रूचियों, अभिवृत्तियों, तथा पक्षपातों आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा प्रलेखी विश्लेषण द्वारा विद्यालय, व्यक्ति व समाज की कमजोरियों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त यह विद्यालय तथा समाज की विशिष्ट अवस्थाओं तथा क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक होता है।

4. जनमत सर्वेक्षण – औद्योगिक, राजनीतिक, शैक्षिक, तथा अन्य क्षेत्र में सफल होने के लिये नेताओं को अनेक निर्णय लेने होते हैं। ये नेता किसी अनुमान अथवा दबाव में आकर निर्णय लेने की जगह जनमत को ध्यान में रखकर निर्णय लेना पसन्द करते हैं। जनमत संग्रह के द्वारा राजनैतिक नेता यह जानने का प्रयास करते हैं कि किसी कार्यक्रम विशेष के प्रति जनता का रूख क्या है? इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में जनमत संग्रह के द्वारा विद्यालय की क्रियाओं के प्रति जनता के रूख में जानने का प्रयास किया जाता है। जनमत सर्वेक्षण में उपकरण के रूप में प्रायः प्रश्नावली तथा साक्षात्कार का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है। जनमत सर्वेक्षण के परिणाम विश्वसनीय व वैध होने के लिये न्यायदर्श का चुनाव बड़ी सावधानी से करना चाहिये। यह जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाला होना चाहिये। साथ ही संख्या में पर्याप्त व इसे व्यापक रूप से चुना होना चाहिये तथा इसका चुनाव पक्षपता रहित ढंग से होना चाहिये। तभी विभिन्न क्षेत्रों मे चल रहे कार्यक्रमों की कमियों को पहचान कर उसे प्रभावी ढ़ंग से लागू किया जा सकता है।

5. समुदाय सर्वेक्षण – इसे सामाजिक सर्वेक्षण या क्षेत्रीय सर्वेक्षण भी कहा जाता है। यह किसी विशेष अवस्था का सर्वेक्षण हो सकता है जैसे स्वास्थ–सेवाओं का सर्वेक्षण, काल–अपराध का सर्वेक्षण आदि इसके अलावा यह समाज के किसी विशेष अंग से सम्बन्धित हो सकता है। जैसे हरिजनों, पिछड़ी जातियों की समस्याओं से सम्बन्धित सर्वेक्षण /समुदाय सर्वेक्षण के द्वारा समुदाय के सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाले निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है । जैसे–

(1) इतिहास – किसी समुदाय विशेष के उदय व विकास की कहानी क्या है ? तथा किन परिस्थितियों में , किसके नेतृत्व में किसी प्रकार व किन कारणों से क्या–क्या परिवर्तन आये हैं यह जानने का प्रयास किया जाता है।

(2) भौगोलिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ – इसके अन्तर्गत हम यह जानने का प्रयास करते हैं कि किस प्रकार विभिन्न भौगोलिक व आर्थिक परिस्थितयां समाज को प्रभावित कर रही हैं।

(3) सरकार व कानून – इसके द्वारा हम देखते हैं कि किस प्रकार राजकीय व्यवस्था व कानून किस रूप में समाज को प्रभावित कर रहे हैं ?

(4) जनसंख्या – आयु, लिंग, जाति, रंग, शिक्षा, पेशा, भाषा आदि की दृष्टि से जनसंख्या कैसी है, कितनी है, जन्म व मृत्यु दर क्या है तथा यह किस प्रकार समाज को तथा किन रूपों में प्रभावित कर रही है ?

समुदाय–सर्वेक्षण में उपकरण के रूप में प्रश्नावली, साक्षात्कार तथा प्रत्यक्ष निरीक्षण एवं सांख्यिकी विधियों का प्रयोग कर विभिन्न अधिकारियों, सामाजिक संस्थाओं, बालकों, शिक्षकों तथा विभिन्न अभिलेखों से आंकड़े प्राप्त किये जाते हैं।

बोध प्रश्न –

1. विद्यालय सर्वेक्षण से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

2. समुदाय सर्वेक्षण को प्रभावित करने वाले कौन–कौन से कारण है ?

.....

.....

.....

6.8 अन्तर सम्बन्धों का अध्ययन

इसमें अनुसन्धानकर्ता केवल वर्तमान स्थिति का सर्वेक्षण ही नहीं करता है बल्कि उन तत्वों को ढूँढने का प्रयास भी करता है जो घटनाओं के सम्बन्ध के विषय में सूझ प्रदान कर सके।

अन्तर–सम्बन्धों के अध्ययन मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं :–

1. व्यक्ति अध्ययन (Case Study)
2. कार्य–कारण तुलनात्मक अध्ययन (Causal – Comparative Study)
3. सह–सम्बन्धात्मक अध्ययन (Correlational Study)

1. व्यक्ति अध्ययन (Case Study) –

इसके अन्तर्गत किसी सामाजिक इकाई एक व्यक्ति, परिवार समूह, सामाजिक संस्था अथवा समुदाय का गहन अध्ययन किया जाता है। इसमें किसी सामाजिक इकाई को प्रभावित करने वाली भूतकालीन घटनाओं अथवा अनुभूतियों, वर्तमान स्थिति एवं वातावरण के सम्बन्ध में आंकड़े एकत्र किये जाते हैं। व्यक्ति अध्ययन सामाजिक कार्यकर्ता या अनुसन्धानकर्ता किसी विशेष परिस्थिति का निदान करने व उसके उपचार का सुझाव देने की दृष्टि से किया जाता है। इसके अन्तर्गत सामान्य की अपेक्षा असामान्य व्यक्ति अथवा इकाई के अध्ययन पर जोर दिया जाता है। व्यक्ति अध्ययन में प्रायः निम्नलिखित स्रोतों का प्रयोग किया जाता है–

क. व्यक्तिगत आलेख – आत्मकथायें, डायरी व पत्र व स्वीकारोक्तियाँ आदि ।

ख. सम्बन्धित व्यक्ति – माता–पिता, पड़ोसी, मित्र, अध्यापक, रिश्ते–नातेदार आदि।

ग. जीवनवृत्त आलेख (Life History)– यह व्यक्ति के जीवन की उन घटनाओं का आलेख होता है जो उससे सीधे सम्बन्धित होते हैं।

घ. राजकीय आलेख – विद्यालय प्रमाण, पुलिस व न्यायालय रिकार्ड आदि।

व्यक्ति अध्ययन में प्रयुक्त कुछ प्रमुख उपकरण निम्नलिखित है–

1. निरीक्षण विधि 2. साक्षात्कार विधि 3. साक्षात्कार अनुसूची
4. प्रश्नावली विधि 5. मनोवैज्ञानिक परीक्षण 6. मुक्त साहचर्य
7. वैयक्तिक अध्ययन तथ्य प्रपत्र आदि।

2. कार्य–कारण तुलनात्मक अध्ययन (Causal- Comparative Study) -

इसे कार्योत्तर या घटनोत्तर अनुसन्धान के नाम से भी जाना जाता है। इसके अन्तर्गत किसी समस्या के समाधान को उसके कार्यकारण सम्बन्ध के आधार पर ढूँढते है तथा यह जानने का प्रयास करते हैं कि विशेष व्यवहार, परिस्थिति अथवा घटना के घटित होने से सम्बन्धित कारक कौन–कौन से हैं ?

कार्य–कारण तुलनात्मक अध्ययन विधि का प्रयोग उन शोध कार्यो के होता है जहाँ पर परीक्षण नहीं हो सकता है या नहीं किया जाना चाहिये। जैसे किशोरों के अपराधवृत्ति का अध्ययन, मोटर दुर्घटना का अध्ययन आदि।

यह विधि मुख्य रूप से इस धारणा पर आधारित है कि किसी घटना अथवा परिस्थिति के उत्पन्न होने का कोई न कोई कारण अवश्य होता है । यदि कारण उपस्थित है तो घटना अवश्य घटित होगी तथा यदि वह कारण अनुपस्थित है तो वह घटना नहीं घटेगी। इस धारणा को आधार बनाकर घटित घटना के निष्कर्ष को आधार बनाकर विश्लेषणात्मक एंव तुलनात्मक विधि से पीछे की ओर चलते हैं और कारणों को ज्ञात करते हैं।

3. सह–सम्बन्धात्मक अध्ययन – (Correlational Study) –

मोले के अनुसार–''सहसम्बन्ध दो चरों में सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए उनके विषय में भविष्य कथन भी करता है।'' अतः यह दो या दो से अधिक चरों, घटनाओं या वस्तुओं के पारस्परिक सम्बन्ध के अध्ययन से सम्बन्धित है। कार्यकारण सम्बन्ध को समझने की दृष्टि से इस विधि का प्रयोग किया जाता है। जैसे यदि अनुसन्धानकर्ता शारीरिक और मानसिक विकास के सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहता है। तो वह सहसम्बन्ध शोध का प्रयोग करेगा। जब दो चरों में एक चर के बढ़ने से दूसरे चर में वृद्धि या घटाव हो तथा एक चर के घटाव से दूसरे चर में वृद्धि या घटाव हो, हम कहते है कि दोनो चरों में सह सम्बन्ध है।

सह सम्बन्ध मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं –

1. धनात्मक सहसम्बन्ध – जब एक चर के बढ़ने से दूसरे चर में भी वृद्धि हो अथवा एक चर के घटने से दूसरे चर में भी घटाव हो तो इस प्रकार का सहसम्बन्ध धनात्मक सहसम्बन्ध कहलाता है।

2. ऋणात्मक सहसम्बन्ध – जब एक चर में वृद्धि होने पर दूसरे चर में घटाव हो या एक चर में घटाव होने पर दूसरे चर में वृद्धि हो, तो इस प्रकार का सहसम्बन्ध ऋणात्मक सहसम्बन्ध कहलाता है।

3. शून्य सहसम्बन्ध – जब एक चर के घटाव या वृद्धि का दूसरे चर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, तो इसे शून्य सहसम्बन्ध कहा जाता है।

सह सम्बन्ध की मात्रा – सह सम्बन्ध का मान +1के मध्य ही होता है। शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक परिस्थितियों में इसका मान पूर्ण धनात्मक (+1) या पूर्ण ऋणात्मक (–1) सामान्यतः प्राप्त नही होता है।

सह सम्बन्ध का प्रयोग अनुसन्धान में उपकरणों को तैयार करने, उसकी विश्वसनीयता तथा वैधता ज्ञान करने के लिये किया जाता है। इसके अलावा यह उपलब्ध ऑकड़ों के आधार पर यह शैक्षणिक सफलता की भविष्यवाणी किसी समूह के लिये करने में सक्षम है।

6.9 विकासात्मक अध्ययन

विकासात्मक अध्ययन केवल वर्तमान स्थिति एंव पारिस्परिक सम्बन्ध को ही स्पष्ट नहीं करता है बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि समय व्यतीत होने के साथ इनमें क्या परिवर्तन आये हैं ? इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता महीनों एवं वर्षो तक चरों के विकास का अध्ययन करता है। इसके अन्तर्गत दो प्रकार के अध्ययन शामिल है–

(1) विकासात्मक अध्ययन

(2) उपनति अध्ययन

(1) विकासात्मक अध्ययन– यह अध्ययन मुख्यतः दो प्रकार से किया जा सकता है।

क. अनुदैर्घ्य अध्ययन

ख. प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन

क. अनुदैर्घ्य अध्ययन (Longitudinal Study) – इस प्रकार के अध्ययन में बालकों के विकास की स्थिति का अध्ययन थोड़े–थोड़े समय के अन्तर पर करते हैं। जैसे– एक समूह के बालकों का अनेक चरों से सहसम्बन्ध का अध्ययन 12, 13, 14, 15 और 16 वर्ष की आयु में करके रेखाचित प्रस्तुत करना।

ख. प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन (Cross-Sectional Study) – इसमें एक ही बालक अथवा समूह का वर्षों तक अध्ययन करने की जगह एक ही समय में विभिन्न आयु के बालकों का अध्ययन एक साथ करते हैं। जैसे–किसी चर के

सम्बन्ध में अध्ययन करने के लिये एक ही समय में एक साथ 12, 13, 14 और 15 वर्ष की आयु के बालकों को लेना।

वास्तव में अनुदैर्घ्य अध्ययन ही विकासात्मक अध्ययन की सर्वोत्तम विधि ा है किन्तु समय और श्रम की बचत के कारण प्रतिनिध्यिात्मक अध्ययन का प्रेयोग बहुतायत से होता है। इससे अनुसन्धानकर्ता अल्प समय में ही आवश्यक ऑकड़े जुटा सकने में सक्षम होता है।

(2) उपनति अध्ययन (Trend Study) – यह वास्तव में ऐतिहासिक अध्ययन अभिलेखी अध्ययन और सवेर्क्षण अनुसन्धान का मिश्रण है। इसके द्वारा –

क. सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक ऑकड़ो की प्राप्ति की जाती है।

ख. इन ऑकड़ों के विश्लेषण द्वारा वर्तमान उपनति की व्याख्या और वर्णन किया जाता है।

ग. इसके आधार पर भविष्य में क्या होने वाला है। इसकी भविष्यवाणी की जाती है।

किसी भी नई नीति का निर्धारण करने व उसके नियोजन से पूर्व उपनति अध्ययन अवश्य करनी चाहिये। इसके अभाव में नीति की प्रभावशीलता घट सकती है। व्यक्तियों का रूझान किस ओर है? वर्तमान परिस्थितियॉ समाज को किधर ले जायेगी ? अगले 10 वर्ष में विधालयों में छात्रों की संख्या कितनी हो जायेगी ? इस प्रकार के अध्ययन उपनति अध्ययन कहे जाते हैं ।

अतः वर्णनात्मक अनुसन्धान में वर्तमान हालातों को रिकार्ड किया जाता है। साथ ही उनका वर्णन व विश्लेषण भी किया जाता है तथा समुचित व्याख्या भी की जाती है। इस प्रकार के शोध अपरिचलित चरों (non-manipulation variable) के बीच के सम्बन्धों का साधारण का सामान्य परिस्थिति में विश्लेषण किया जाता है। इस प्रकार का शोध मुख्यतः 'क्या है' से सम्बन्धित है। यह इसी 'क्या है ' का वर्णन और व्याख्या करता है।

बोध प्रश्न –

1. सह सम्बन्ध के प्रकार बताइये।

.....

.....

.....

2. शून्य सम्बन्ध से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

.....

3. विकासात्मक अध्ययन के प्रकार के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

.....

6.10 अभ्यास प्रश्न

प्र0 – वर्णनात्मक अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं ?

प्र0 – वर्णनात्मक अनुसन्धान के पद की उपयोगिता बताइये।

प्र0 – वर्णनात्मक अनुसन्धान के प्रकार की विवेचना कीजिए।

प्र0 – सर्वेक्षण अध्ययन से आप क्या समझते हैं ?

प्र0 – अन्तर सम्बन्धों के अध्ययन एवं महत्व को बताइये।

प्र0 – विकासात्मक अध्ययन के प्रकार स्पष्ट कीजिए।

6.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बेस्ट, जॉन डब्लू : रिसर्च इन एजूकेशन, इन्गलवुड क्लिफ, एन0जे0, प्रिन्टिस हाल, नई दिल्ली, 1997।

सिंह, अरूण कु0 : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, दिल्ली, 2007।

कौल, लोकेश : शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, 2005।

भटनागर, आर0पी0 : शिक्षा अनुसन्धान, लायल बुक डिपो, मेरठ, 2003।

राय, पारसनाथ : अनुसंधान परिचय, नवरंग ऑफसेट प्रिन्टर्स, आगरा, 2002।

गुप्ता, एस0पी0 : आधुनिक मापन और मूल्यांकन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2010।

इकाई – 07 प्रयोगात्मक अनुसन्धान

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 प्रयोगात्मक अनुसन्धान

7.3.1 स्वतन्त्र चर

7.3.2 आश्रित चर

7.3.3 समाकलित चर

7.3.4 प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह

7.4 प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं

7.4.1 नियन्त्रण

7.4.2 जोड़–तोड़

7.4.3 अवलोकन

7.4.4 पुनरावृत्ति

7.5 प्रयोगात्मक अभिकल्प

7.5.1 प्रयोगात्मक अभिकल्प प्रसरण नियन्त्रण प्रणाली के रूप में

7.5.2 प्रयोगात्मक प्रसरण को उच्चतम करना

7.5.3 त्रुटि प्रसरण को निम्नवत करना

7.5.4 वाहय चरों को नियन्त्रित करना

7.6 एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी

7.6.1 उपयुक्तता

7.6.2 प्रर्याप्त नियन्त्रण

7.6.3 वैधता

7.6.4 आन्तरिक वैधता

7.7 प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार

7.7.1 पूर्व–प्रायोगिक अभिकल्प

7.7.2 प्रायोगिक अभिकल्प

7.7.3 वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प

7.8 अभ्यास प्रश्न

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रयोगात्मक अनुसन्धान प्रश्नों का व्यवस्थित, वस्तुनिष्ठ एवं तार्किक दृष्टि से उत्तर प्राप्त करने का वह प्रयास है जिससे यह पता लग सके कि X चर में सावधानीापूर्वक नियन्त्रित परिस्थिति के संदर्भ में हेर–फेर लाया जाए तो चर Y पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस विधि को प्रायोगिक विधि के नाम से भी पुकारा जा सकता है। इसके अन्तर्गत दो चर निहित होते है। एक चर को निराश्रित चर अर्थात 'X' कहा जाता है जिससे उसमें शोधकर्ता हेर–फेर लाने के लिए स्वतन्त्र होता है, दूसरे चर को आश्रित चर अर्थात 'Y' कहा जाता है। जिसके जरिए निराश्रित चर में हेरफेर के प्रभाव का प्रेक्षण एवं मापन किया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए चर X के अतिरिक्त अन्य कोई चर Y पर पड़े प्रभाव को दूषित न कर पाये तथा पूरी परिस्थिति को पर्याप्त नियन्यण में रखा जाता है। इस इकाई में प्रायोगिक अनुसन्धान विधि की प्रक्रिया, विशेषताओं, अभिकल्प एवं अभिकल्पों के प्रकारों का वर्णन किया गया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप–

1. प्रयोगात्मक अनुसन्धान का अर्थ, चर एवं उनके प्रकारों के विषय में जान सकेंगे।
2. प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं को समझ सकेंगे।
3. प्रयोगात्मक अभिकल्प के बारे में बता सकेंगे।
4. एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी से अवगत हो सकेगे।
5. प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार को जान सकेंगे।

7.3 प्रयोगात्मक अनुसन्धान

प्रयोगात्मक अनुसन्धान, अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में कार्य कारण सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित करने के लिये दो स्थितियों को संतुष्ट करना होता है। पहले तो यह सिद्ध करना होता है कि यदि कारण है तो उसका प्रभाव होगा। यह स्थिति आवश्यक है लेकिन पर्याप्त नहीं है। दूसरा हमें यह भी सिद्ध करना होता हैकि यदि कारण नहीं है तो प्रभाव भी नहीं होगा। यदि वही कारण न हो फिर भी प्रभाव हो तो इसका अर्थ यह हुआ कि प्रभाव का वह कारण नहीं है जो हम अपेक्षा कर रहे थे। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में कारण की उपस्थिति प्रभाव को दिखाती है तथा कारण की अनुपस्थिति प्रभाव को नहीं दिखाती है। इन्ही दो स्थितियों को सन्तुष्ट करने के बाद हम सही कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं ।

प्रयोगात्मक अनुसन्धान, जान स्टुआर्ट के ''एकल चर के नियम'' (Law of Single Variable) पर आधारित है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान का आधार

''अन्तर की विधि (Method of Difference) है। इस विधि के अनुसार –

'' यदि दो परिस्थितियां सभी दृष्टियों से समान है तथा यदि किसी चर को एक परिस्थिति में जोड़ दिया जाए तथा दूसरी स्थिति में नहीं जोड़ा जाए और यदि पहली परिस्थिति में कोई परिवर्तन दिखाई पड़े तो वह परिवर्तन उस चर के जोड़ने के कारण होगा। यदि किसी एक परिस्थिति में एक चर हटा लिया तथा दूसरी परिस्थिति में उस चर को न हटाए तब यदि पहली परिस्थिति में कोई परिवर्तन होगा तो वह उस चर के हटा लेने के कारण होगा।''

चर – प्रयोगात्मक अनुसन्धान में निम्नलिखित चरों का वर्णन किया जाता है–

7.3.1 स्वतन्त्र चर (Independent Variable) –

जिस चर में प्रयोगकर्ता परिवर्तन या जोड़–तोड़ करता है, उसे स्वतन्त्र चर कहा जाता है। स्वतन्त्र चर को 'कारण चर' (cause variable) भी कहा जाता है। इसे 'प्रभावित करने वाला चर' (Influencing variable) कहा जाता है क्योंकि यह किसी दूसरे चर को प्रभावित करता है।

उदाहरण – पढ़ाने का तरीका, बुद्धि, अभिवृत्ति, व्यक्तित्व, प्रेरणा, आयु ।

स्वतन्त्र चर दो प्रकार के होते हैं –

1. संचालित चर (Treatment variable)
2. जैविक चर (organismic variable)

जिन चरों में शोधकर्ता द्वारा जोड़–तोड़ करना सम्भव होता है उसे संचालित चर कहते हैं, जैसे – पढ़ाने का तरीका, दण्ड, पुरस्कार आदि।

जिन चरों में शोधकर्ता द्वारा परिवर्तन सम्भव नहीं होता है उन्हें जैविक चर कहते हैं जैसे –बुद्धि, प्रजाति, आयु आदि।

7.3.2 आश्रित चर (Dependent Variable) –

स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ के बाद उसका प्रभाव जिस चर पर देखा जाता है उसे आश्रित चर कहा जाता है। इसी कारण आश्रित चर को 'प्रभाव चर' (Effect Variable) कहा जाता है। आश्रित चर के अवलोकन के बाद उसकी रिकार्डिग शोधकर्ता द्वारा की जाती है।

यदि पढ़ाने की विधि के प्रभाव का अध्ययन हम शैक्षिक उपस्थित पर करना चाहते हैं तथा दो या तीन भिन्न–भिन्न विधियों से बच्चों को पढ़ाया जाए तथा इसका प्रभाव उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर देखा जाए तो इस अध्ययन में 'पढ़ाने की विधि' एक स्वतन्त्र चर है तथा 'शैक्षिक उपलब्धि' एक आश्रित चर है।

7.3.3 समाकलित चर (Confounding Variable) –

किसी भी अध्ययन में स्वतन्त्र चर के अतिरिक्त ऐसे कुछ चर होते हैं तो आश्रित चर को प्रभावित करते हैं। स्वतन्त्र चर का प्रभाव हमें आश्रित चर पर

देखना होता है। चयनित स्वतन्त्र चर के अतिरिक्त सभी चर भी आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। इन चरों को समाकलित चर कहा जाता है। समाकलित चर दो प्रकार के होते हैं –

क. हस्तक्षेपी चर (Intervening Variable) – कुछ चर ऐसे होते हैं जिन्हें हम सीधे नियंत्रित नहीं कर सकते और न ही उनका मापन कर सकते हैं लेकिन उनकी उपस्थिति का आश्रित चर पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के चरों का उदाहरण –दुश्चिन्ता, प्रेरणा तथा थकान आदि है। इन चरों का अवलोकन तथा संक्रियात्मक परिभाषीकरण करना भी मुश्किल होता है लेकिन इनको अनदेखा नहीं किया जा सकता। उपयुक्त शोध–डिजाइन के प्रयोग द्वारा इन्हें हम नियन्त्रित कर सकते हैं।

ख. वाह्य चर (Extraneous Variable) – स्वतन्त्र चर का प्रभाव हम आश्रित चर पर देखते हैं। ऐसे चर जिनका अध्ययन हमे नहीं करना होता या शोधकर्ता जिनमें कोई जोड़–तोड़ नहीं करना उनका प्रभाव भी आश्रित चर पर पड़ता है। इसलिये ऐसे चरों को नियन्त्रित करना आवश्यक होता है। इन्हे ही वाह्य चर कहते हैं। वाह्य चरों पर नियन्त्रण कई विधियों से किया जाता है। वाहय चर अध्ययन के परिणाम को प्रभावित करते हैं तथा यह स्वतन्त्र चर तथा आश्रित चर दोनो से सहसम्बन्धित होते हैं।

स्वतन्त्र चर – अध्यापक

आश्रित चर – परीक्षा परिणाम

वाहय चर – विद्यालय का वातावरण

7.3.4 प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह (Experimental Group and Control Group) –

कार्य–कारण सम्बन्धों को स्थापित करने के लिये हमें दो पारिस्थितियों को संतुष्ट करना होता है। पहली परिस्थिति मे में यह देखना होता है यदि कारण है तो प्रभाव होगा तथा दूसरी परिस्थिति में हमें यह देखना हेाता है कि यदि कारण नहीं है तो प्रभाव भी नहीं हेागा। इसी कारण प्रयोगात्मक अनुसन्धान में दो समूह होते हैं – एक प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरा नियन्त्रित समूह।

प्रयोगात्मक समूह – इस समूह में शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ किया जाता है। यह सिद्ध किया जाता है कि यदि कारण है तो इसका प्रभाव होगा। जोड़–तोड़ का प्रभाव आश्रित चर पर देखा जाता है।

नियन्त्रित समूह – इस समूह में शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर में कोई जोड़–तोड़ नहीं किया जाता है। यह सिद्ध किया जाता है कि यदि कारण नहीं है तो इसका प्रभाव भी नहीं है।

7.4 प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं :

प्रयोगात्मक अनुसन्धान की चार प्रमुख विशेषताएं होती है ।

1. नियन्त्रण (Control)
2. जोड़–तोड़ (Manipulation)
3. अवलोकन (Observation)
4. पुनरावृत्ति (Replication)

7.4.1 नियन्त्रण (Control) :–

नियन्त्रण प्रयोगात्मक अनुसन्धान की एक प्रमुख विशेषता है। प्रयोगात्मक अनुसन्धान में हमें स्वतन्त्र चर का प्रभाव आश्रित चर पर देखना होता है। विश्वसनीय परिणाम पाने के लिये वाहय चरों का नियन्त्रण अतिआवश्यक होता है। नियन्त्रण कई विधियो ंसे किया जा सकता है।

(क) विलोपन (Elimination) :– वाहय चरों को नियन्त्रित करने का सबसे आसान तरीका है कि इन चरो को अध्ययन से निष्कासित कर दिया जाए ताकि आश्रित चर पर उसके प्रभाव को विलोपित किया जा सके। यदि बुद्धि वाहय चर है तो दोनों समूहों में समान बुद्धिलब्धि (IQ) के प्रयोज्यों को रखकर इस चर को नियन्त्रित किया जा सकता है। यदि आयु वाहय चर है तो एक समान आयु के प्रयोज्यों पर अध्ययन करके आयु को नियन्त्रित किया जा सकता है। परन्तु इस विधि से नियन्त्रण करने के बाद अध्ययन का सामान्यीकरण केवल उन प्रयोज्यों पर ही किया जा सकता है जिनको अध्ययन में शामिल किया गया है। अध्ययन के परिणाम में हम उसी आयु वर्ग में सामान्यीकृत किया जा सकेगा।

(ख) यादृच्छिकीकरण (Randomization) :– यादृच्छिकीकरण केवल एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा सभी वाहय चरों समूह तथा नियन्त्रित समूह असमतुल्य हो सकते है लेकिन फिर भी उनके समान होने की प्रायिकता बहुत अधिक होती है। जहां तक सम्भव हो प्रयोगात्मक समूह में यादृच्छिक ढ़ंग से प्रयोज्यों को आबंटित किया जाना चाहिए तथा यादृच्छिक ढ़ंग से आबंटित स्थितियों को प्रयोगात्मक समूह को दिया जाना चाहिए।

(ग) वाह्यय चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलना (To convert the Extraneous variable into a independent variable) :– वाह्य चरों को नियन्त्रित करने का एक तरीका यह भी है कि जिस वाहय चर को हमें नियन्त्रित करना है उसका हम अपने अध्ययन में शामिल कर लें। यदि आयु या बुद्धि हमारे अध्ययन में वाहय चर है तो हम इन चरों को भी अपने अध्ययन में शामिल कर लें। इन चरों (बुद्धि और आयु) का प्रभाव आश्रित चर पर देंखेगे तथा इन चरों की आपस में अन्तक्रिया का प्रभाव क्या होगा ? यह भी अध्ययन किया जाएगा।

(घ) प्रयोज्यों को सुमेलित करना (Matching Cases) :– इस विधि में वाह्य चरों को नियन्त्रित करने में ऐसे प्रयोज्यों को लिया जाता है जो एक समान विशोषताएं रखते हैं तथा इनमें से कुछ को प्रयोगात्मक समूह में तथा कुछ को नियन्त्रित समूह में रखा जाता है।

इस विधि की अपनी कुछ सीमाएं है जैसे एक से अधिक चरों के आधार पर प्रयोज्यों को सुमेलित करना एक कठिन कार्य है। बहुत से प्रयोज्यों को अध्ययन से अलग करना पड़ता है क्योंकि वह सुमेलित नहीं हो पाते ।

(ड़) समूहों को सुमेलित करना (Group Matching) :– इस विधि से वाह्य चरों को नियन्त्रित करने में प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह में प्रयोज्यों को इस प्रकार आबंटित किया जाता है कि जहां तक सम्भव होता है दोनों समूहों का मध्यमान तथा प्रसरण लगभगसमान हो।

(च) सह प्रसरण विश्लेषण (Analysis of covariance) :– वाहय चरों के आधार पर प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह में होने वाले प्रारम्भिक अन्तर को सांख्यिकीय विधि से दूर किया जाता है।

7.4.2 जोड़–तोड (Manipulation) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान की प्रमुख विशेषता है – स्वतंत्र चर में जोड़–तोड़ करना। स्वतन्त्र चर में जेाड़–तोड़ करके उसके प्रभाव को आश्रित चर पर देखा जाता है। स्वतन्त्र चर के उदाहरण है–आयु, सामाजिक–आर्थिक स्तर, कक्षा का वातावरण, व्यक्तित्व की विशेषता आदि। इनमें से कुछ चरों में शोधकर्ता के द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। जैसे–शिक्षण विधि तथा पढ़ाने का विषय आदि। कुछ चरों में सीधे परिवर्तन न करके चयन द्वारा परिवर्तन किया जाता है जैसे– आयु, बुद्धि, आदि। शोधकर्ता एक समय में एक या एक से अधिक स्वतन्त्र चरों में जोड़–तोड़ कर सकता है।

7.4.3 अवलोकन (Observation) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान में स्वतन्त्र चर मे जोड़–तोड़ करके उसके प्रभाव को आश्रित चर पर देखा जाता है। आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभाव को सीधे नहीं देखा जा सकता। शैक्षिक उपलब्धि तथा अधिगम यदि आश्रित चर है तो इनको सीधे नहीं देखा जा सकता है। शैक्षिक उपलब्धि को परीक्षा में प्राप्त अंकों के अवलोकन के आधार पर देखा जाएगा।

7.4.4 पुनरावृत्ति (Replication) :-

प्रयोगात्मक अनुसन्धान में यदि सभी वाहय चरों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया गया तथा प्रयोज्यों को आबंटन यादृच्छिक विधि से किया जाए तब भी ऐसे बहुत से कारक हो सकते हैं जो अध्ययन के परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं। पुनरावृत्ति के द्वारा इस तरह के समस्या का समाधान किया जा सकता है । यदि किसी प्रयोग में 15–15 प्रयोज्य प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह में है तथा उनका आबंटन यादृच्छिक विधि से किया गया है तो यह एक प्रयोग न होकर 15 समानान्तर प्रयोग होते हैं। प्रत्येक जोड़े को अपने आप में एक प्रयोग माना जाता है।

बोध प्रश्न –

1. वाहय चर से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

.....

2. प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताओं के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

7.5 प्रयोगात्मक अभिकल्प :

जिस प्रकार कोई वास्तुकार किसी भवन के निर्माण के लिये पहले एक ब्लूप्रिन्ट तैयार करता है, उसी प्रकार एक शोधकर्ता शोध कार्य को सुचारू रूप से करने के लिए एक प्रयोगात्मक अभिकल्प (Research Design) तैयार करता है। प्रायोगिक अभिकल्प में उन चरों का वर्णन किया जाता है जिनका हमें अध्ययन करना हेाता है, चरों को मापने के लिए जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाएगा उसका वर्णन किया जाता है, न्यादर्श जिसका हमें अध्ययन करना है उसका वर्णन किया जाता है, ऑकड़ों को इकट्ठा करने की विधि तथा आंकड़ो को विश्लेषित करने की सांख्यिकीय विधियों के बारे में बताया जाता है।

7.5.1 प्रयोगात्मक अभिकल्प प्रसरण नियन्त्रण प्रणाली के रूप में (Experimental Design as Variance Control Mechasnism) :-

शोध अभिकल्प को प्रसरण नियन्त्रण प्रणाली के रूप में देखा जाता है। इसमें प्रसरण को नियन्त्रित किया जाता है। प्रयोगात्मक प्रसरण (Experimental variance) या क्रमबद्ध प्रसरण (Systematic variance) को उच्चतम किया जाता है, त्रुटि प्रसरण (Error variance) को निम्नवत किया जाता है तथा वाहय चरों (Extraneous variables) का नियन्त्रण किया जाता है। प्रायोगात्मक अभिकल्प के द्वारा प्रसरण को नियन्त्रित करने के सांख्यिकीय सिद्धान्त को ''अधिकतम–न्यूनतम–नियन्त्रण सिद्धान्त'' (Principal of Max-Min-Con) कहा जा सकता है।

7.5.2 प्रयोगात्मक प्रसरण को अधिकतम करना (Maximize Experimental Variance) –

प्रयोगात्मक प्रसरण का अर्थ है– आश्रित चर में उत्पन्न प्रसरण जो कि शोधकर्ता द्वारा स्वतन्त्र चर मे जोड़–तोड़ करके किया जाता है। शोध अभिकल्प का तकनीकी उद्देश्य होता है कि प्रयोगात्मक प्रसरण को अधिकतम किया जाए।

शोध अभिकल्प ऐसा हेा जिसमें जहां तक सम्भव हो प्रयोगात्मक अवस्थाएं (Experimental Conditions) एक दूसरे से अधिक से अधिक अन्तर रखती हों। प्रयोगात्मक अवस्थाएं जितनी अधिक से अधिक भिन्न होगी, आश्रित चर पर उतना ही अधिक प्रयोगात्मक प्रसरण देखा जा सकेगा।

7.5.3 त्रुटि प्रसरण को निम्नतम करना (Minimize Error Variance) -

प्रयोगात्मक अभिकल्प का उद्देश्य है त्रुटि प्रसरणको निम्नतम करना। किसीभी प्रयोग में त्रुटि प्रसरण को कम करने का प्रयास किया जाना चाहिए। त्रुटि प्रसरण वैसे प्रसरण को कहा जाता है जो शोध में ऐसे कारकों से उत्पन्न होता है जेा शोधकर्ता के नियन्त्रण से बाहर होता है। व्यक्तिगत विभिन्नताओं के कारण त्रुटि प्रसरण होता है जो शोधकर्ता के नियन्त्रण से बाहर होता है।

त्रुटि प्रसरण का दूसरा कारक मापन त्रुटियों से सम्बन्धित होता है। ऐसे कारकों में एक प्रयास से दूसरे प्रयास में होने वाली अनुक्रियाों में भिन्नता, प्रयोज्यों द्वारा अनुमान लगाना तथा थकान आदि है।

त्रुटि प्रसरण केा प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक एक दूसरे से अन्तक्रिया करके एक–दूसरे से प्रभाव को समाप्त करने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण त्रुटि प्रसरण को आत्मपूरक (Self-Compensating) कहा जाता है। त्रुटि प्रसरण यादृच्छिक त्रुटियों पर आधारित होता है इसलिये यह अपूर्वकथनीय (Unpredictable) होता है।

त्रुटि प्रसरण को दो विधियों से कम किया जा सकता है।

(i) नियन्त्रित दशाओं में यदि प्रयोग किया जाए तो त्रुटि प्रसरण को कम किया जा सकता है।

(ii) मापन की विश्वसनीयता को बढ़ाकर त्रुटि प्रसरण को निम्नतम किय जा सकता है।

7.5.4 वाह्य चरों को नियन्त्रित करना (To Control Extraneous Variable) :-

वाह्य चरों का जहां तक सम्भव हो नियन्त्रण किया जाना चाहिये। वाह्य चरों का नियन्त्रण कई विधियों से किया जा सकता है, जैसे– विलोपन, यादृच्छिकीकरण, वाहय चर को स्वतन्त्र चर के रूप में बदलकर, प्रयोज्यो को सुमेलित करके, समूहों को सुमेलित करके तथा सह प्रसरण विश्लेषण।

7.6 एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी :

7.6.1 उपयुक्तता (Appropriateness) –

प्रायोगिक अभिकल्प को उपयुक्त हेाना चाहिए तभी प्रयोग के विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रायोगिक अभिकल्प जटिल या सरल न हेाकर उपयुक्त होनी चाहिये। उपयुक्त अभिकल्प के चयन द्वारा शोधकर्ता अध्ययन की

आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वस्तुनिष्ठ विधि से प्रयोगात्मक अवस्थाएं व्यवस्थित करता है।

7.6.2 पर्याप्त नियन्त्रण (Adequacy of Control) –

प्रायोगिक अभिकल्प ऐसा हेाना चाहिए जिसमें वाह्य चरों पर पर्याप्त नियन्त्रण किया जा सके। वाह्य चरों पर पर्याप्त नियन्त्रण से ही शोध के विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते है। वाह्य चरों का नियन्त्रण कई विधि ायों से किया जाता है परन्तु यादृच्छिकीकरण के द्वारा सभी वाह्य चरों का नियन्त्रण किया जा सकता है।

7.6.3 वैधता (Validity) –

किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प के लिये तीसरी कसौटी है– वैधता। प्रायोगिक अभिकल्प को वैध होना चाहिए। वैधता दो प्रकार की होती है–आन्तरिक वैधता तथा वाहय वैधता।

7.6.4 आन्तरिक वैधता –

प्रयोगात्मक अनुसन्धान का उद्देश्य है कि स्वतन्त्र चर का प्रभाव आश्रित चर देखा जाए, इसके लिये सभी वाहय चरों पर नियन्त्रण किया जाए। किसी भी प्रयोगात्मक अभिकल्प में इस उद्देश्य को किस सीमा तक प्राप्त किया गया है, उसकी आन्तरिक वैधता को बताता है। आन्तरिक वैधता मूलरूप से नियन्त्रण की समस्या से सम्बन्धित है।

कैम्पबेल तथा स्टैनले के अनुसार आठ प्रकार के वाह्य चर किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प की आन्तरिक वैधता को प्रभावित करते हैं।

(i) इतिहास (History) :- इतिहास का अर्थ है कुछ अप्रत्याशित घटनाएं जो प्रयोग के समय सकारात्मक रूप से या नकारात्मक रूप से आश्रित चर को प्रभावित करती हैं।

यदि किसी शिक्षक को प्रयोग के लिए प्रशिक्षित किया जाए लेकिन प्रयोग पूरा होने से पहले उसका स्थानान्तरण हो जाए तो प्रयोग का परिणाम प्रभावित होगा।

यदि किसी राजनीतिक कारण से अप्रत्याशित रूप से स्कूल बन्द हेा जाए प्रयोग के बीच में या छात्रों के द्वारा हड़ताल कर दी जाए तो यह सभी कारण प्रयोग के पारिणाम को प्रभावित करेंगे । इन कारकों का प्रभाव भी आश्रित चर पर पड़ेगा।

(ii) परिपक्वता (Maturity) :- लम्बे समय तक चलने वाले प्रयोगों में यह देखा जाता है कि प्रयोग की अवधि में प्रयोज्यों में परिवर्तन, परिपक्वता की वजह से हो जाते हैं। उक्त सभी आश्रित चर में होने वाले परिवर्तन के कारण हो सकते हैं तथा प्रयोग के परिणाम को प्रभावित करते हैं।

यदि किसी प्रशिक्षण का प्रभाव हमें शैक्षिक उपलब्धि पर देखना है तथा प्रशिक्षण एव वर्ष का हो तो शैक्षिक उपलब्धि में होने वाला परिवर्तन केवल प्रशिक्षण का प्रभाव नही हो सकता। एक वर्ष में छात्रों की मानसिक योग्यता का विकास अधिक हो सकता है, उसके कारण भी शैक्षिक उपलब्धि बढ़ सकती है।

(iii) **पूर्व–परीक्षण (Pre-testing) :–** बहुत से प्रयोगात्मक अनुसन्धान में पूर्व – परीक्षण किये जाते हैं तथा फिर उपचार देने के बाद (स्वतन्त्र चर में जोड़–तोड़ करने के बाद) उसी परीक्षण को उन्हीं प्रयोज्यों पर पुनः प्रशासित किया जाता है। सामान्य रूप से यह देखने को मिलता है कि पूर्व–परीक्षण अभ्यास का कार्य करता है। पश्च–परीक्षण में जो प्राप्तांक आते हैं वह केवल उपचार के कारण न होकर पूर्व–परीक्षण का अभ्यास के रूप में कार्य करने के कारण भी हो सकता है तथा आन्तरिक वैधता को प्रभावित करते हैं।

(iv) मापन त्रुटि (Measurement Error) :– किसी चर का मापन करने के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। यदि प्रयोग मे लाए गये उपकरण विश्वसनीय नहीं है तो प्रयोग की आन्तरिक वैधता प्रभावित होती है।

शोधकर्ता यदि उपकरण का सही तरीके से प्रयोग नहीं कर पाता तथा यदि परीक्षण को प्रशासित करने के लिए प्रशिक्षण नहीं दिया गया तो चर के मापन में त्रुटि हो सकती है।

(v) सांख्यिकीय प्रतिगमन (Statistical Regression) :– कुछ प्रयोगों में पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण दोनों करना आवश्यक हेाता है। यदि शोधकर्ता किसी ऐसे प्रयोज्य का चयन कर लेता है जो अपने गुणों में या तो अति श्रेष्ठ है या निकृष्ट (Extreme cases) तो सामान्य रूप से ऐसा देखा जाता है कि जो प्रयोज्य पूर्व –परीक्षण पर निम्न अंक प्राप्त करते हैं वह पश्च–परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करते हैं। जेा प्रयोज्य पूर्व–परीक्षण पर उच्च अंक प्राप्त करते हैं वह पर्श्च–परीक्षण पर निम्न अंक प्राप्त करते हैं इसे ही सांख्यिकीय प्रतिगमन कहते हैं। पश्च–परीक्षण पर प्राप्त अंक उपचार के कारण न हेाकर सांख्यिकीय प्रतिगमन के कारण हो सकते है। इस घटना से प्रयोग की आन्तरिक वैधता प्रभावित होती है।

(vi) प्रायोगिक नश्वरता (Experimental Martality) :– जो प्रयोग लम्बे समय तक चलते हैं उनमें सामान्य रूप से यह देखा जाता है कि प्रयोग की अवधि में ही कुछ प्रयोज्यों की अनुपलब्धता हो जाती है। प्रयोगकर्ता प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह में यादृच्छिकीकरण विधि से प्रयोज्यों को आबंटित करता है लेकिन बीच में कुछ प्रयोज्यों को छोड़ देने से प्रयोग के अन्तिम परिणाम प्रभावित होते हैं।

(vii) चयन पूर्वाग्रह (Selection Bias) :– न्यादर्श को जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करना चाहिए। यादृच्छिक न्यादर्श प्रविधियों के प्रयोग से ऐसा न्यादर्श चुना जा सकता है। यदि शोधकर्ता ने यादृच्छिक विधि से न्यादर्श चयन नही किया है या प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह को समतुल्य नहीं बनाया गया तो न्यादर्श का चयन सही नहीं होगा। इस कारण सही परिणाम नहीं प्राप्त हो सकेंगे।

(viii) चयन तथा परिपक्वता की अन्तःक्रिया (Interaction Effect) :– न्यादर्श का चयन तथा परिपक्वता का प्रभाव प्रयोग की आन्तरिक वैधता को प्रभावित करता है लेकिन इन दोनों की अन्तर्क्रिया का प्रभाव भी आन्तरिक वैधता पर पड़ता है। इस तरह की अन्तर्क्रिया का प्रभाव उस स्थिति में पड़ता है जब उपचार को यादृच्छिक ढ़ंग से न आंबटित करके प्रयोज्य स्वयं किसी एक प्रकार के उपचार का चयन कर लेते हैं। किसी विशेष प्रकार के उपचार के चयन का कारण आश्रित चर को प्रभावित कर सकता है।

यदि दो विधियों से किसी एक प्रकरण को पढ़ाया जाए तथा इन विधियों की प्रभावशीलता का अध्यन किया जाए, तथा समूह का चयन ऐसे किया कि एक समूह में अधिक परिपक्व प्रयोज्य हो तो दोनों विधियों की प्रभावशीलता का सही आंकलन नहीं किया जा सकता।

(ख) वाहय वैधता (External validity) :– किसी भी प्रयोगके परिणामों को कितनी अधिक जनसंख्या में सामान्यीकृत किया जा सकता है यह उस प्रयोग की वाहय वैधता होती है। परिणामों को जितनी अधिक जनंसख्या पर सामान्यीकृत किया जा सकता है उस प्रयोग की वाहय वैधता उतनी ही अधिक होती है। वाहय वैधता को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते हैं।

(i) पूर्व–उपचार (Pre- treatment) :– जब एक ही समूह नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक दोनों रूपों में कार्य करता है तो पूर्व–उपचार का प्रभाव वाहय वैधता पर पड़ता है। एक ही समूह को बारी–बारी से नियन्त्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह बनाया जाता है तो पूर्व–उपचार के प्रभाव को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता। इस स्थिति में उन प्रयोज्यों पर परिणामों को सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता जिन पर पूर्व उपचार नहीं किया गया है।

(ii) प्रयोग की कृत्रिम परिस्थिति (Artificiality of Experimental Setting):– प्रयोगशाला अनुसन्धान (Laboratory Experiment) में लगभग सभी वाहय चरों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जाता है और यही नियन्त्रण प्रयोग को कृत्रिम बनाता है। वास्तविक जीवन की स्थितियों में इस प्रकार की कृत्रिमता नहीं होती और न ही यह सम्भव है कि कृत्रिम स्थितियों को उत्पन्न किया जा सके। इसी कारण इन कृत्रिम परिस्थितियों में किए गये अनुसन्धान के परिणामों को सामान्यीकृत

करने की बहुत सीमाएं होती है। इन परिस्थितियों में किए गये अनुसन्धानों की वाहय वैधता बहुत कम होती है।

7.7 प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार :

प्रायोगिक अभिकल्प विभिन्न प्रकार के होते हैं। इनमें अन्तर उनकी जटिलता तथा नियन्त्रण की पर्याप्तता का होता है। किसी भी प्रायोगिक अभिकल्प का चुनाव कुछ कारकों पर निर्भर करता है जैसे – प्रयोग के उद्देश्य तथा प्रकृति में, चरों के प्रकार पर जिन्हें संचालित(Monipulates) करना है, प्रयोग की सुविधा तथा प्रयोग की परिस्थितियों पर तथा शोधकर्ता की कार्यकुशलता पर। अभिकल्प रचना में सामान्यतः समूह के अक्षर G से, RG यादृच्छिक चयनित समूह, MG समेल समूह, T उपचार, C नियन्त्रण तथा O प्रेक्षण या निरीक्षण के लिये उपुयक्त किये जाते हैं।

प्रायोगिक अभिकल्प को मुख्य रूप से तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है–

(1) पूर्व–प्रायोगिक अभिकल्प (Pre-experimental design)

(2) अर्ध प्रयोगिक अभिकल्प (Quasi-experimental design)

(3) वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प (True-experimental design)

7.7.1 पूर्व–प्रायोगिक अभिकल्प (Pre-experimental design)

पूर्व प्रायोगिक अभिकल्प में वाहय चरों पर नियन्त्रण बहुत कम या बिल्कुल नहीं होता है। इसमें या तो नियन्त्रित समूह होता ही नही है और यदि होता भी है तो नियन्त्रित तथा प्रायोगिक समूह को समतुल्य नहीं बनाया जाता है । इस प्रकार के अभिकल्प सबसे कम प्रभावशाली होते हैं। यह तीन प्रकार के अभिकल्प होते हैं।

(i) **एकल प्रयास अध्ययन (One shot case study)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में शोधकर्ता द्वारा एक समूह का चयन किया जाता है तथा उसको उपचार दिया जाता है तथा उस समूह पर पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा परिणाम को उपचार का कारण माना जाता है । इस अभिकल्प से प्राप्त परिणामों को सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता है तथा इसमें आन्तरिक वैधता की कमी पायी जाती है।

G : TO

(ii) **एकल समूह पूर्व परीक्षण–पश्च परीक्षण अभिकल्प (The Single group Pre-test treatment Post-test design)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में एक समूह का चयन किया जाता है उस पर पूर्व परीक्षण किया जाता है तथा आश्रित चर का मापन किया जाता है। इसके बाद उस समूह को उपचार (Treatment) दिया जाता है। उपचार के बाद पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा

फिर से आश्रित चर का मापन किया जाता है। पूर्व–परीक्षण के बाद तथा पश्च–परीक्षण के बाद आश्रित चर के मानों के अन्तर को उपचार का प्रभाव माना जाता है।

इस अभिकल्प में वाहय चरों पर कोई नियन्त्रण नहीं किया जाता तथा इनमें कोई नियन्त्रित समूह नही होता है इसलिए प्रयोगात्मक अनुसन्धान की दूसरी शर्त कि यदि ''कारण नही है तो प्रभाव भी नहीं'' को सत्यापित नहीं किया जा सकता।

G : पूर्व परीक्षण O
G : T पश्च परीक्षण O

(iii) **स्थिर समूह अभिकल्प (Static group comparision)** :- इस प्रकार के अभिकल्प में दो समूहों का चयन किया जाता है तथा एक समूह को उपचार दिया जाता है तथा दूसरे समूह को किसी भी प्रकार का उपचार नहीं दिया जाता है। पश्च–परीक्षण दोनो समूहों का किया जाता है। दोनो समूहों के पश्च–परीक्षण के परिणामों में अन्तर उपचार का प्रभाव होता है, ऐसा माना जाता है।

यद्यपि इस अभिकल्प में एक नियन्त्रित समूह होता है लेकिन नियन्त्रित तथा प्रयोगात्मक समूह को समतुल्य नहीं बनाया जाता। यदि दोनों समूह में शुरू से ही आश्रित चर पर अन्तर होता है तो पश्च–परीक्षण के परिणामों में अन्तर को पूरी तरह से उपचार का प्रभाव नहीं माना जा सकता। इस प्रकार के अभिकल्प में आन्तरिक वैधता की कमी पायी जाती है।

G_1 : P_{RT} T O P_{OT}
G_2 : P_{RT} T O P_{OT}

7.7.2 प्रयोगिक कल्प अभिकल्प (Quasi-experimental design)

प्रायोगिक कल्प अभिकल्प में जहां तक सम्भव होता है वाहय चरों को नियन्त्रित किया जाता है। प्रयोग में दो समूह होते हैं प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूह, लेकिन प्रयोगात्मक समूह तथा नियन्त्रित समूहों में प्रयोज्यों का आबंटन यादृच्छिक तरीके से न हो पाने के कारण दोनों समूहों को समतुल्य नहीं बनाया जा पाता। बहुत सी ऐसी परिस्थितियां हेाती है जब यादृच्छिकीकरण से न्यादर्श का चयन नहीं हो सकता तथा यादृच्छिक आबंटन की अनुमति भी नहीं मिल पाती। इन परिस्थितियों में केवल प्रयोगिक कल्प अभिकल्प का ही प्रयोग किया जा सकता है।

(i) **असमतुल्य पूर्व परीक्षण–पश्च परीक्षण अभिकल्प (Non Equivalent Pretest –Posttest design)** :- कभी –कभी व्यवहारिक रूप से यह सम्भव नहीं होता है कि स्कूलों में या किसी स्कूल के दो वर्गो में यादृच्छिक आबंटन द्वारा दो समूह का निर्माण किया जा सके। इन परिस्थितियों में स्कूलों को या किसी एक स्कूल के दो वर्गो को यादृच्छिक रूप से एक स्कूल या एक वर्ग को प्रयोगात्मक समूह या दूसरे स्कूल या दूसरे वर्ग को नियन्त्रित समूह मान लिया जाता है।

पूर्व–परीक्षण दोनों समूहों का किया जाता है जबकि उपचार केवल प्रायोगिक समूह को दिया जाता है। पश्च–परीक्षण दोनों समूहों का किया जाता है। प्रयोगात्मक समूह के पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के बीच अन्तर ज्ञात किया जाता है तथा इसी प्रकार नियन्त्रित समूह के पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के अन्तर को ज्ञात किया जाता है। यदि इन दोनों के बीच का अन्तर सार्थक होता है तो यह निष्कर्ष निकलता है कि उपचार प्रभावी है।

जब यादृच्छिक आबंटन सम्भव नहीं होता है तब इस अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प की सबसे बड़ी सीमा यह है कि यदि दोनो समूहों में पूर्व–परीक्षण में आश्रित चर के मान में कोई अन्तर नहीं आता है तब तो ठीक है लेकिन यदि प्रारम्भिक अवस्था में दोनों समूहों में अन्तर आता है तो हम इस अन्तर को सांख्यिकीय रूप से सह प्रसरण विश्लेषण प्रविधि के द्वारा नियन्त्रित करने का प्रयास करते हैं।

(ii) **प्रति सन्तुलित अभिकल्प (Counter Balanced Design)** :- जब हम समूहों को यादृच्छिक रूप से आबंटित नही कर सकते हैं तथा हमें दो या तीन प्रकार के उपचार देने हेाते हैं तो इस प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प में सभी समूहों को सभी तरह के उपचार यादृच्छिक रूप से दिये जाते है। प्रत्येक समूह को प्रत्येक तरह का उपचार क्रम बदल–बदल कर दिया जाता है। प्रयोग के शुरूआत में सभी समूहों पर पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा प्रत्येक समय अन्तराल के बाद पश्च–परीक्षण किया जाता है तथा अन्त में एक पश्च –परीक्षण सभी समूहों का किया जाता है।

Time Sequence

Group		1^{st}	2^{nd}	3^{rd}	4^{th}	P
A	PrT	T_1	T_2	T_3	T_4	P_0T_5
B	PrT	T_3	T_4	T_2	T_1	P_0T_5
C	PrT	T_2	T_1	T_4	T_3	P_0T_5
D	PrT	T_4	T_3	T_1	T_2	P_0T_5

यदि चार प्रकार के उपचार है तो हमें चार समूह लेगे। इस अभिकल्प में उपचारों की संख्या तथा समूहों की संख्या को संतुलित किया जाता है इसलिये इसे प्रतिसंतुलित अभिकल्प कहा जाता है। इस अभिकल्प में उच्च कोटि की आन्तरिक वैधता होती है।

7.7.3 वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प (True-experimental design)

वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प में प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह को यादृच्छिक आबंटन के द्वारा समतुल्य बनाया जाता है। इसी कारण इस अभिकल्प में आन्तरिक वैधता के सभी कारकों को नियन्त्रित किया जाता है। वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में वास्तविक प्रायोगिक अभिकल्प का प्रयोग एक कठिन कार्य है क्योंकि इन परिस्थितियों में सभी चरों का नियन्त्रण सम्भव

नहीं होता तथा यादृच्छिक आबंटन भी सम्भव नहीं हो पाता। इस अभिकल्प का प्रयोग एक कठिन कार्य है लेकिन जहाँ तक सम्भव हो इसी प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें प्रयोगात्मक अनुसन्धान के सभी सिद्धान्तों का पालन किया जाता है।

वास्तविक प्रयोगिक अभिकल्प कई प्रकार के होते हैं :–

(i) **केवल पश्च समतुल्य समूह अभिकल्प (The Post test only, Equivalent Groups Design)** :- इस अभिकल्प में यादृच्छिक आबंटन के द्वारा दो समतुल्य समूह बनाए जाते हैं। किसी एक समूह को यादृच्छिक रूप से उपचार दिया जाता है तथा उसे प्रायोगिक समूह मान लिया जाता है तथा दूसरे समूह को नियन्त्रित समूह मान लिया जाता है। उपचार केवल प्रायोगिक समूह को दिया जाता है लेकिन आश्रित चर का मापान दोनों समूहों के लिये किया जाता है। दोनों समूहों में आने वाला अन्तर उपचार का प्रभाव माना जाता है। इस अभिकल्प में समूहों का निर्माण यादृच्छिक आबंटन के द्वारा होता है इसलिये इन दोनों समूहों में समतुल्यता होती है। इस कारण आश्रित चर में आने वाला अन्तर उपचार का प्रभाव ही माना जाता है।

$$\begin{array}{|l} Gr_1\ (E_R)\ \ T\ P_{0T} \\ Gr_2\ (C_R)\ \ P_{0T} \end{array}$$

(ii) **पूर्व परीक्षण पश्च समतुल्य समूह अभिकल्प (The Pre-test - Post Test Equivalent Groups Design)** :- यह अभिकल्प पहले वाले अभिकल्प से केवल इसमें अन्तर रखता है कि इसमें पूर्व परीक्षण भी किया जाता है। इस अभिकल्प में यादृच्छिक आबंटन के द्वारा प्रायोगिक समूह तथा नियन्त्रित समूह में प्रयोज्यों को रखा जाता है तथा दोनों समूहों का पूर्व–परीक्षण किया जाता है। इसके बाद शोधकर्ता केवल प्रायोगिक समूह को उपचार देता है। प्रयोग के अन्त में दोनों समूहों पर पश्च–परीक्षण किया जाता है । आश्रित चर का मापन किया जाता है। पूर्व–परीक्षण तथा पश्च–परीक्षण के बीच आने वाले अन्तर को उपयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियों के द्वारा ज्ञात किया जाता है। यदि दोनों के बीच सार्थक अन्तर आता है तो इसे उपचार का प्रभाव माना जाता है।

$$\begin{array}{|l} Gr_1\ (E_R)\ Pr_T\ T\ P_{0T} \\ Gr_2\ (C_R)\ Pr_T\ -\ P_{0T} \end{array}$$

(iii) **सोलोमन चार समूह अभिकल्प (Soloman Four Groups Design)** :- कभी–कभी पूर्व परीक्षण का प्रभाव उपचार के प्रभाव को प्रभावित करता है। पूर्व–परीक्षण के प्रभाव को ज्ञात करने के लिये इस अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प में चार समूह होते हैं। दो प्रायोगिक समूह होते हैं जिसमें एक पर पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा दूसरे समूह पर कोई पूर्व परीक्षण नहीं किया जाता है। इसी प्रकार दो नियन्त्रित समूह होते हैं एक में पूर्व–परीक्षण किया जाता है तथा दूसरे में कोई पूर्व–परीक्षण नहीं किया जाता है। इन सभी समूहों में प्रयोज्यों की आबंटन यादृच्छिक विधि से किया जाता है। पश्च परीक्षण चारों

समूहों पर किया जाता है।

Gr_1	E_R	$P_r T_1$	T	$P_0 T_1$
Gr_2	C_R	$P_r T_2$	–	$P_0 T_2$
Gr_3	E_R	–	T	$P_0 T_3$
Gr_4	C_R	–	–	$P_0 T_4$

बोध प्रश्न : –

1. प्रयोगात्मक अभिकल्प का क्या तात्पर्य है ?

.....

.

.....

.....

.

2. एक अच्छे प्रायोगिक अभिकल्प की तीन कसौटियों के नाम लिखिये ।

.....

.....

.....

7.8 अभ्यास प्रश्न

प्र0 – प्रयोगात्मक अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं ?

प्र0– प्रयोगात्मक अनुसन्धान के चर को स्पष्ट कीजिए।

प्र0– प्रयोगात्मक अनुसन्धान की विशेषताएं बताइये ।

प्र0– प्रयोगात्मक अभिकल्प के रूप को स्पष्ट कीजिए।

प्र0– प्रायोगिक अभिकल्प की कसौटी की व्याख्या कीजिए।

प्र0– प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकार को बताइये।

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बेस्ट, जॉन डब्लू : रिसर्च इन एजूकेशन, इन्गलवुड क्लिफ, एन0जे0, प्रिन्टिस हाल, 1997।

सिंह, अरूण कुमार : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2007।

कौल, लोकेश : शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, 2005।

भटनागर, आर0पी0 : शिक्षा अनुसन्धान, लायल बुक डिपो, मेरठ, 2003।

राय, पारसनाथ : अनुसंधान परिचय, नवरंग ऑफसेट प्रिन्टर्स, आगरा, 2002 ।

गुप्ता, एस0पी0 : आधुनिक मापन और मूल्यांकंन, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2010।

इकाई –08 गुणात्मक अनुसन्धान

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 गुणात्मक अनुसन्धान अर्थ एवं विशेषतायें

8.4 गुणात्मक अनुसन्धान के उद्देश्य एवं प्रसंग

8.5 गुणात्मक अनुसन्धान का महत्व

8.6 गुणात्मक अनुसन्धान के प्रकार

8.7 गुणात्मक अनुसन्धान में प्रदत्त संग्रह के उपकरण

8.8 गुणात्मक प्रदत्त विश्लेषण की तकनीकें

8.9 सारांश

8.10 अभ्यास प्रश्न

8.11 चर्चा के बिन्दु

8.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

जैसा कि पूर्व इकाईयों में स्पष्ट हो चुका हे कि शोध विधि किसी समस्या के अध्ययन की एक विशेष प्रक्रिया है। शोधकर्त्ता या शोधकर्ती द्वारा शोध हेतु चुने गये प्रकरण की प्रकृति अनुसन्धान की विधि एवं प्रदत्त संकलन की विधि को निर्धारित करती है तथा प्राप्त सूचनाओं या प्रदत्तों की प्रकृति यह निर्धारित करती है कि अनुसन्धान मूलतः मात्रात्मक अनुसन्धान है या गुणात्मक अनुसन्धान। यह इकाई पूर्व इकाई के क्रम में है जिसमें भावी अनुसन्धान तथा शोध के सन्दर्भो की दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं नवीन अनुसन्धान के रूप गुणात्मक अनुसन्धान के बारे में हम लोग चर्चा करेंगें। इस इकाई में हम लोग गुणात्मक अनुसन्धान के अर्थ के साथ–साथ उसकी प्रक्रिया आदि को भी समझने का प्रयास करेंगें।

8.2 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन से तुम लोग निम्न योग्यतायें अर्जित कर सकोगे–

1. गुणात्मक अनुसन्धान के प्रत्यय एवं उसकी विशेषताओं को समझ सकोगे।
2. गुणात्मक अनुसन्धान के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकोगे।
3. गुणात्मक अनुसन्धान के विभिन्न प्रकारों एवं उसके महत्व के बारे में अवबोध विकसित हो सकेगा।
4. गुणात्मक अनुसन्धान के प्रदत्तों के संग्रह के उपकरणों को जान कर उनका प्रयोग कर सकेंगे।

5. गुणात्मक अनुसन्धान के प्रदत्तों की विश्लेषण की तकनीकों को समझ सकेंगे तथा विश्लेषण कर अनुसन्धान के निष्कर्षो केा प्राप्त करने के योग्य हो सकेंगे।

8.3 गुणात्मक अनुसन्धान– अर्थ एवं विशेषतायें :

अनुसन्धान विधियों को मुख्यतः दो रूपों में बॉटा जा सकता है– तार्किक प्रत्यक्षवाद (Logical Positivism) तथा गोचर खोज (Phenomenological Inquiry) । शैक्षिक शोधों में पहला रूप ज्यादा प्रयुक्त हुआ है। परन्तु विगत एक दशक से शैक्षिक परिस्थितियों से सम्बन्धित समस्याओं, समाधान प्रक्रियाओं एवं व्यवस्थाओं से मुद्दों को स्पष्ट एवं उजागर करने के लिये गोचर खोज उपागम पर ज्यादा बल दिया जा रहा है। शोध के इन्हीं उपागमों के आधार पर शोध को तीन भॉगों में बॉटा जा सकता है– मात्रात्मक शोध, गुणात्मक शोध एवं क्रियात्मक शोध । वास्तव में शोध के मात्रात्मक तथा गुणात्मक शोधों मे ंन तो कोई स्पष्ट अन्तर है और न ही दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों शोधों में मात्रात्मक एवं गुणात्मक प्रदत्तों का प्रयोग हो सकता है। इसीलिये अब तक गुणात्मक शोध की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं बन सकी है। गुणात्मक अनुसन्धान के विषय में जॉन डब्ल्यू बेस्ट तथा जेम्स वी कान ने कहा है–

''क्या है ? का वर्णन करने के लिए गुणात्मक विवरणात्मक अनुसन्धान अमात्रात्मक विधियों का प्रयोग करता है। गुणात्मक विवरणात्मक शोध प्रत्यक्ष चरों के मध्य के अमात्रात्मक सम्बन्धों को जानने के लिये व्यवस्थित प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है।''

गुणात्मक अनुसन्धान के लिये व्यवहार में कई पद प्रयुक्त किये जाते हैं, जैसे – नृ–शास्त्र शोध (Enthnographic Research) व्यष्टि अध्ययन शोध (Case Study Research), घटना–क्रिया विज्ञानपरक शोध (Phenomenological Research) तथा संरचनावाद (Constructivism), सहभागी प्रेक्षण (Participant Observation) आदि।

गुणात्मक अनुसन्धान में जब नृः शास्त्रीय शोध शब्द का प्रयोग होता है, तब घटित घटनाओं के स्थान पर वर्तमान की घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। इसमें शोधकर्ता या शोधकर्ती का दृष्टिकोण खोज के गोचर (Phenomena) के प्रति अधिक व्यैक्तिक तथा मृदु होता है। वह व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, पसन्दों या व्यवहारों के कारणों तथा अभिप्रेरणाओं के प्रति समझ पैदा करने के लिये व्यैक्तिक लेखों, असंरचित साक्षात्कारों, तथा सहभागी प्रेक्षण विधियों का प्रयोग करता है। इस प्रकार के अनुसन्धान में संकलित प्रदत्तों का उपयोग परिकल्पनाओं की जॉच के स्थान पर परिकल्पनाओं के निर्माण में किया जाता है।

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि गुणात्मक अनुसन्धान गहनतापूर्वक किया जाने वाला एक ऐसा व्यस्थित प्रक्रियाओं वाला अनुसन्धान है जिसमें

गुणात्मक प्रदत्त संकलन की विधियों का प्रयोग कर परिकल्पनात्मक निष्कर्षों को मात्रात्मक या गुणात्मक रूप में प्राप्त किया जाता है तथा जिसका सम्बन्ध वर्तमान गोचर से होता है।

गुणात्मक अनुसन्धान की विशेषतायें :–

गुणात्मक अनुसन्धान के सम्बन्ध में उपरोक्त बातों से उसकी विशेषताओं को सरलता से जाना जा सकता है। प्रमुख विशेषतायें निम्न हैं–

1. गुणात्मक अनुसन्धान में आगमनात्मक (Inductive) उपागम का प्रयोग होता है।
2. इसमें शोधकर्ता या शोधकर्ती की अहं भूमिका होती है।
3. गुणात्मक अनुसन्धान का केन्द्र बिन्दु विशिष्ट परिस्थिति, संस्थायें, समुदाय या मानव समूह होता है।
4. यह मात्रात्मक प्राप्तांको, मापन तथा सांख्यिकीय विश्लेषण के स्थान पर निहित कारणों, व्याख्याओं और निहित अर्थों पर बल देता है।
5. यह संरचित उपकरणों के स्थान पर व्यैक्तिक अनुभवों को ज्यादा बल देता है।
6. यह कम घटनाओं या कम समूह या कम सदस्य संख्या पर आधारित हेाता है।
7. इसकी आधार सामाग्रियॉ साक्षात्कार, प्रत्यक्ष प्रेक्षण तथा लिखित अभिलेख हेाते हैं।
8. इसमें संगठनात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।
9. मात्रात्मक अनुसन्धान में जहॉ सार्वभौमिक सामान्यीकरण किया जाता है वहीं गुणात्मक अनुसन्धान विशिष्ट सन्दर्भ के साथ केन्द्रित रहता है।
10. गुणात्मक अनुसन्धान ज्ञान के विशिष्ट, सही या सत्य के मार्ग पर विश्वास नहीं करता बल्कि परिस्थितिजन्य ज्ञान पर बल देता है।

बोध प्रश्न :–

1. गुणात्मक अनुसन्धान की किन्हीं पॉच विशेषताओं को लिखिये।

.....

.....

.....

2. गुणात्मक अनुसन्धान के लिये किन–किन पदों को प्रयुक्त किया जाता है?

.....

.....

.....

8.4 गुणात्मक अनुसन्धान के उद्देश्य एवं प्रसंग (Objective and Theme of Qualitative Research)

गुणात्मक अनुसन्धान के उद्देश्यों को निम्न बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है–

1. अभिवृत्ति, पूर्वाग्रह, पसंद, संगठनात्मक वातावरण आदि जैसे विस्तृत अर्थ वाले पदो के लिए गहन समझ विकसित करना।
2. ऐसे सन्दर्भों (Context) को समझना जिसमें कुछ व्यवहार अभिव्यक्त होते हैं या कुछ घटनायें घटित होती है।
3. एक प्रत्याशित घटना की पहचान करना।
4. किसी प्रक्रिया का समझना।
5. निमित्तीय (causal) व्याख्या विकसित करना।
6. विशिष्ट प्रकार के व्यवहार या विशिष्ट घटना को बढ़ाने वाले जिम्मेदार कारकों को जानने के लिये गहन अध्ययन करना।
7. किसी घटना या व्यवहार के लिये जिम्मेदार विभिन्न कारकों के मध्य के अर्न्तसम्बन्धों का अध्ययन करना।

गुणात्मक अनुसन्धान के इन उद्देश्यों को फ्रायड द्वारा विकसित मनोविश्लेषण के सिद्धान्त तथा पियाजे द्वारा विकसित संज्ञात्मक विकास सिद्धान्त द्वारा समझा जा सकता है जिसमें उन्होंने गुणात्मक अनुसन्धान का प्रयोग किया था।

गुणात्मक अनुसन्धान की विशेताओं तथा उद्देश्यों के आधार पर गुणात्मक अनुसन्धान के प्रसंगो (Themes) को निर्धारित किया जा सकता है।

गुणात्मक अनुसन्धान के प्रसंग (Theme of the Qulitative Research)

गुणात्मक अनुसन्धान के प्रसंगों को पैटन (Patton) ने दस प्रसंगों के रूप में इंगित किया है। पैटन द्वारा बताये गये प्रसंग निम्नवत है–

1. नैसर्गिक अध्ययन (Naturalistic Inquiry)

अर्थात पूर्व निर्धारित नियमों के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों के बिना, बिना किसी नियन्त्रण या बाधा के, बिना किसी हस्तक्षेप के, वास्तविक सांसारिक परिस्थितियों में अनसुलझी प्रकृतिजन्य परिस्थितियों में अध्ययन।

2. आगमनात्मक विश्लेषण (Inductive Analysis)

अर्थात सैद्धान्तिक आधार पर परिकल्पनाओं के निर्माण एवं जॉच के स्थान पर खोज के लिये प्राप्त विस्तृत तथा विशिष्ट प्रदत्तों के महत्वपूर्ण वर्गों, विभागों तथा अर्न्तसम्बन्धों को समझना।

3. समग्र परिप्रेक्ष्य (Holistic Perspective)

अर्थात किसी घटना के अंशों या विवृत चरों के रेखीय या कार्यकारण सम्बन्धों के स्थान पर अध्ययन विषय की सम्पूर्ण घटना (Whole phenomenon) को जटिल व्यवस्था के रूप में अध्ययन।

4. गुणात्मक प्रदत्त (Qualitiative Data)

अर्थात मानव के व्यैक्तिक लेखों, अनुभवों, प्रत्यक्ष भाषणों, व्याख्याओं आदि का विस्तृत एवं गहन अध्ययन।

5. व्यक्तिगत सम्पर्क एवं अर्न्तदृष्टि (Personal contact and Insight)

अर्थात शोधार्थी, व्यक्तियों या घटनाओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क में रहकर व्यैक्तिक अनुभव एवं अर्न्तदृष्टि के आधार पर व्यक्तियों के व्यवहारों या घटना के प्रति समझ विकसित करता है।

6. अभिकल्पगत नम्यता (Design Flexibility)

अर्थात शोधार्थी के लिए शोध अभिकल्प का चुनाव करने में नम्यता रहती है। वह परिस्थिति के अनुसार अभिकल्पों का निर्माण एवं उनमें परिवर्तन कर सकता है।

7. तदनुभूतिजन्य तटस्थता (Empathic Neutrality)

विषय वस्तु की आवश्यकतानुरूप शोधार्थी अपने व्यैक्तिक अनुभव एवं अर्न्तदृष्टि का प्रयोग अध्ययन में करता है परन्तु वह व्यैक्तिक पूर्वाग्रहों या पूर्व निर्धारित धारणाओं को उससे अलग रखते हुए घटना का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करता है।

8. सन्दर्भगत सूक्ष्म ग्राहिता (Context Sensivity)

अर्थात् शोधार्थी स्थान एवं समय की दृष्टि से घटना या परिस्थितियों के सामाजिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के प्रति सन्वेदनशील होता है।

9. विशिष्ट व्यष्टि अभिमुखीकरण (Unique case Orientation)

अर्थात् शोधार्थी व्यक्तिगत अध्ययन से शोध की तुलना कर प्रत्येक व्यष्टि को विशिष्ट तथा अद्वितीय मानता है।

10. गतिशील व्यवस्थायें (Dynamic System)

अर्थात शोधार्थी प्रक्रिया के प्रति सावधान रहता है तथा सम्पूर्ण संस्कृति या एक व्यक्ति पर केन्द्रित रहते हुए परिवर्तनों को स्थिर मानकर

कार्य करता है।

बोध प्रश्न –

1. गुणात्मक अनुसन्धान के किन्हीं तीन प्रमुख उद्देश्यों को लिखिये ।

.....

.....

.....

2. गुणात्मक अनुसन्धान के किन्हीं पॉच प्रसंगों को लिखिये।

.....

.....

.....

8.5 गुणात्मक अनुसन्धान का महत्व

गुणात्मक अनुसन्धान का शोध में महत्वपूर्ण स्थान है। भले ही शैक्षिक अनुसन्धान में गुणात्मक अनुसन्धान अब तक उपेक्षित रहा हो, लेकिन पिछले दशक से विद्वानों ने शोध की इस विधा पर जोर देना प्रारम्भ कर दिया है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में गुणात्मक अनुसन्धान का प्रयोग तेा बहुत पहले से ही होता रहा है। गुणात्मक अनुसन्धान की विशेषतायें एवं उद्देश्य से इसके महत्व को आंका जा सकता है।

गुणात्मक अनुसन्धान के मूलतः तीन व्यावहारिक उपयोग हैं –

1. ग्राह या समझने योग्य सिद्धान्तों की स्थापना करने में।
2. मूल्यांकित किये जा रहे किसी उत्पाद या किसी कार्यक्रम की उपयोगिता को सामान्य रूप से आंकलित करने के स्थान पर वर्तमान के अभ्यास या प्रयासों को सुधारने की ओर अग्रसर संरचनात्मक मूल्यांकन के संचालन में।
3. शोधार्थियों के साथ सहयोगात्मक शोधों (Collaborative Research) में संलग्नता।

इन व्यवहारिक उपयोग से भी गुणात्मक अनुसन्धान की महत्ता और भी बढ़ जाती है। इस प्रकार से गुणात्मक अनुसन्धान के महत्व को निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

1. सामाजिक एवं शैक्षिक क्षेत्र के लिए सिद्धान्तों के निरूपण की दृष्टि से।
2. शोधार्थियों में शोध के प्रति गहनता बढ़ाने की दृष्टि से।
3. सांख्यिकीय जटिलताओं के स्थान पर शोधार्थियों के अनुभव एवं अर्न्तदृष्टि के विकास की दृष्टि से।

4. किसी घटना के वास्तविक चित्रण की दृष्टि से।
5. अभिवृत्ति, पसंद तथा व्यवहारों को विस्तृत एवं स्पष्ट रूप प्रदान करने की दृष्टि से।
6. भावी अनुसन्धानों को दृष्टि प्रदान करने की दृष्टि से।
7. परिकल्पनाओं के निर्माण की दृष्टि से।
8. शोधार्थियों में आत्मविश्वास एवं उसकी विश्वसनीयता बढ़ाने में।
9. शोध में यान्त्रिकता को न्यून करने की दृष्टि से।
10. विभिन्न समस्याओं के समाधान एवं कार्यक्रमों को सफल बनाने की दृष्टि से।
11. किसी कार्यक्रम के संरचनात्मक मूल्यांकन की दृष्टि से।
12. परस्पर सम्बद्ध शोधों में संलग्नता की दृष्टि से।

शैक्षिक क्षेत्र में गुणात्मक अनुसन्धान के शोध विषयक उदाहरण

शिक्षा क्षेत्र में गुणात्मक अनुसन्धान के शोध विषयों के कुछ उदाहरण निम्न प्रकार के हो सकते हैं :–

- Ø मध्यान्ह भोजन योजना अन्य राज्यों के सापेक्ष तमिलनाडु में सुचारू रूप से क्यों चल रही है ?
- Ø शैक्षिक नीतियों को प्रभावित करने के लिये शिक्षक संगठन क्या युक्तियाँ प्रयोग में लाते है ?
- Ø शैक्षिक गुणवत्ता उन्नयन की दृष्टि से शिक्षक–अभिभावक सहयोग को कैसे बढ़ाया जा सकता है ?
- Ø विद्यालयों के प्रधानाचार्य किन कार्यों में अपना समय अधिक व्यतीत करते हैं ?
- Ø परीक्षाओं के बारे में क्या सोचते हैं ?
- Ø प्रधानाचार्यो की भूमिका के विषय में शिक्षक वर्ग क्या धारणायें रखते हें?
- Ø प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक अध्ययन–अध्यापन को प्रभावी बनाने के लिये क्या प्रयास करते हैं ? आदि।

बोध प्रश्न :–

1. गुणात्मक अनुसन्धान के महत्व को रेखांकित करने वाले तीन उपयोग लिखिये।

.....

.....

.....

2. गुणात्मक अनुसन्धान के शैक्षिक क्षेत्र की किसी समस्या को लिखिये ।

.....

.....

8.6 गुणात्मक अनुसन्धान के प्रकार

गुणात्मक अनुसन्धान की विशेषताओं के आधार पर गुणात्मक अनुसन्धान के मुख्य प्रकार निम्न है–

(i) घटना–क्रिया विज्ञानपरक अध्ययन (Phenomenological Research)

घटना क्रिया विज्ञान एडमण्ड हयूसर्ल (Edmund Husserl) के द्वारा प्रतिपादित माना जाता है। बाद में इसके विकास में मार्टिन हेडेगर (Martin Heidegger) ने भी अपना योगदान दिया। यह एक दार्शनिक परम्परा है। घटना–क्रिया विज्ञान, मानवीय अनुभव के शोध को मुख्य आधार मानता है। इस विधि में शोधार्थी अपने जीवन संसार के अनुभवों को परिलक्षित करता है। इसमें प्रतिभागियों को किसी घटना के बारे में अपने अनुभव को व्यक्त करने का अवसर दिया जाता है तब शोधार्थी प्रतिभागियों के प्रत्यक्षीकरण का विश्लेषण उनके प्रत्यक्षीकरण की समानता तथा भिन्नता के आधार पर करता है।

(ii) हयूरिस्टिक अध्ययन (Heuristic Research)

हयूरिस्टिक शब्द ग्रीक भाषा के हयूरिस्को शब्द से बना है जिसका अर्थ 'to discover' 'मैं खोजता हूँ' होता है। यह आन्तरिक या गहराई से खोज की प्रक्रिया को इंगित करता है, जो विभिन्न अनुभवों के अर्थ एवं प्रकृति को जानने तथा भावी अन्वेषण एवं विश्लेषण की विधियों तथा प्रक्रियाओं के विकास से सम्बन्धित होता है। हयूरिस्टिक अध्ययन एक प्रक्रिया है जो किसी एक समस्या या एक ऐसे प्रश्न से प्रारम्भ होता है जिसका समाधान या उत्तर शोधार्थी प्राप्त करना चाहता है। हयूरिस्टिक अध्ययन की छः कलायें (phases) होती है –

(a) प्रारम्भिक संलग्नता (The initial engagement)

(b) प्रकरण और प्रश्न में डूबना (Immersion)

(c) अनुभवों को एकत्रित करना (Incubation)

(d) उद्घाटित करना (Illumination)

(e) अर्थापन (Expliration)

(f) सृजनात्मक संश्लेषण के रूप में शोध के चरम पर पहुँचना (culmination)

(iii) नृ–शास्त्रीय अध्ययन (Ethnographical Research)

नृ–शास्त्रीय शोध का जन्म मानव शास्त्र विषय से हुआ है। इसका प्रमुख उद्देश्य सामाजिक समूहों का अध्ययन और इसकी सांस्कृतिक विशेषताओं का विवरण देना है। इस विधि में शोधार्थी अध्ययन समूह के सदस्य के रूप सम्मिलित

होकर समूह से आन्तरिकता स्थापित कर उनके साथ लम्बे समय तक रहकर समूह के साक्ष्यों की क्रियाओं, वार्तालापों, सांस्कृतिक विशेषताओं तथा घटनाओं पर सूक्ष्म दृष्टि रख कर एक विस्तृत विवरण तैयार करता है। इस शोध में शोधार्थी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है तथा वस्तुनिष्ठता को बनाये रखना सबसे बड़ी चुनौती होती है। एक नृ–शास्त्रीय अध्ययन के निम्न पद होते हैं –

(a) प्रारम्भिक अन्वेषण (Initial Exploration)

(b) भौगोलिक अवस्थाओं का अध्ययन (Study of the geographical conditions)

(c) प्रेक्षण की योजना बनाना (Planning for the observation)

(d) सामाजिक अवस्थाओं में स्वयं संलग्न होना (Getting into the social setting)

(e) अवस्थाओं या परिस्थितियों का प्रेक्षण करना (Making observation about the setting)

(f) इनके बारे में अन्तिम निष्कर्ष निकालना (Finally drawing conclusions about it)

(iv) व्यष्टि अध्ययन (Case Study)

इसमें किसी घटना से सम्बन्धित कुछ इकाइयों या व्यष्टियों को चुनकर उनका गहन अध्ययन किया जाता है। एक व्यष्टि या इकाई एक व्यक्ति, एक संस्था, एक सामाजिक समूह, एक समुदाय अथवा एक ग्राम हो सकता है। इसमें शोधार्थी को पक्षपात रहित होकर कार्य करना होता है।

(v) दार्शनिक अध्ययन (Philosophical Research)

शैक्षिक शोधों में दार्शनिक अध्ययनों की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। इस प्रकार के अध्ययन मानव जीवन तथा उसके संसार की आधारभूत मान्यताओं के निर्धारण में महत्वपूर्ण होती है। वास्तव में दर्शन शैक्षिक नीतियों तथा प्रक्रियाओं के निर्धारण को प्रभावित करता है।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक दर्शन होता है जो उसके दृष्टिकोण, शिक्षा एवं उसकी नीतियों तथा धारणाओं के निर्माण में सहायक होता है।इसलिये व्यक्ति या देश या समाज के दर्शन के अध्ययन के लिये दार्शनिक शोध किये जाते हैं । इस निधि में विश्लेषणात्मक चिन्तन, अर्न्तदृष्टि तथा विचारों के संश्लेषण की क्षमताओं के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं।

बोध प्रश्न :–

1. गुणात्मक अनुसन्धान के कौन–कौन से प्रकार हैं –

.....

.....

.....

2. नृ–शास्त्रीय अध्ययन से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

8.7 गुणात्मक अनुसन्धान में प्रदत्त संग्रह के उपकरण

गुणात्मक अनुसन्धानों में सूचनाओं या प्रदत्तों के संकलन के लिए मुख्यतः निम्न उपकरणों का उपयोग किया जाता है –

(i) साक्षात्कार

शिक्षाशास्त्र जैसे व्यावहारिक तथा सामाजिक शोधों में साक्षात्कार तकनीक एक महत्वपूर्ण तकनीक है। साक्षात्कार को मौखिक प्रश्नावली के भी रूप में जाना जाता है। साक्षात्कार मुख्यतः दो प्रकार का होता है– संरचित या मानकीकृत साक्षात्कार तथा असंरचित या अमानकीकृत साक्षात्कार। गुणात्मक अनुसन्धानों में प्रदत्त संकलन के उपकरण में इसका प्रयोग बहुतायत किया जाता है। परन्तु गुणात्मक अनुसन्धान में असंरचित साक्षात्कार का प्रयोग ज्यादा होता है।

(ii) प्रेक्षण

प्रेक्षण मुख्यतः दो प्रकार से किया जाता है– सहभागिक तथा असहभागिक अर्थात अध्ययन के सदस्य बनकर किया जाने वाला प्रेक्षण तथा समूह से बाहर रहकर किया जाने वाला प्रेक्षण। गुणात्मक अनुसन्धानों में दोनों प्रकार के प्रेक्षणों का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु अनुसन्धान को विश्वसनीय बनाने के किए सहभागिक प्रेक्षण ज्यादा उपयुक्त माना जाता है।

(iii) अभिलेखीय विश्लेषण

इसमें अभिलेखों के प्रदत्त के रूप में लेकर उनका विश्लेषण कर समान एवं विपरीत कथन या शब्दों को लेकर संश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को ही गुणात्मक अनुसन्धान के एक उपकरण के रूप में व्यक्त किया जाता है। अभिलेख के अन्तर्गत व्यक्ति या घटना से सम्बन्धित लिखित साक्ष्य अर्थात संवाद, लेख, भाषण, या दस्तावेजों को लिया जाता है।

(iv) दृश्य – श्रव्य प्रदत्त विश्लेषण

इस प्रकार के उपकरण में सूचनाओं को निम्न के द्वारा प्रदत्त के रूप में संकलित कर उनका विश्लेषण किया जाता है– श्रव्य टेप, दृश्य टेप, फोटोग्राफ, कलाकृतियाँ, चित्र, पेन्टिंग, संज्ञानात्मक मानचित्र आदि।

(v) केन्द्रित समूह

इसमें विभिन्न समूहों से किसी घटना के बारे में असंरचचित साक्षात्कार के द्वारा प्रतिक्रियायें एकत्रित कर उनका विश्लेषण किया जाता है।

उपरोक्त अतिरिक्त समीपस्थ अध्ययन, अंग गतिक अध्ययन तथा स्ट्रीट नृ–शास्त्रीय अध्ययन भी गुणात्मक अनुसन्धान के उपकरण के रूप में जाने जाते हैं।

बोध प्रश्न –

गुणात्मक अनुसन्धान में प्रदत्त संकलन के किन्हीं तीन उपकरणों को लिखिये।

.....

.....

.....

8.8 गुणात्मक अनुसन्धानों में प्रदत्त विश्लेषण की तकनीकें

गुणात्मक अनुसन्धानों में असम्भाविता प्रतिदर्शन विधियों जैसे –कोटा प्रतिदर्शन, प्रासंगिक प्रतिदर्शन, उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्शन, क्रमबद्ध प्रतिदर्शन, हिमकंदुक प्रतिदर्शन, संतृप्त प्रतिदर्शन, तथा घनीभूत प्रतिदर्शन विधियों का प्रयोग कर शोध ा की इकाइयों का चयन उद्देश्यानुरूप में कर पूर्व वर्णित उपकरणों का प्रयोग करके प्रदत्त संकलित किये जाते हैं। परन्तु प्रदत्तों की प्रकृति प्रयुक्त उपकरण या तकनीक पर निर्भर करती है। फिर भी ज्यादातर गुणात्मक अनुसन्धानों में प्रदत्तों की प्रकृति गुणात्मक रूप में होती है।

इस प्रकार से प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के तीन स्तर होते हैं –

(a) प्रदत्तों का संगठन

(b) प्रदत्तों का विवरण एवं

(c) प्रदत्तों का निर्वचन

प्राप्त प्रदत्तों को विभिन्न आधारों, वर्गों, तथा विशेषताओं के आधार पर संगठित कर उनका विवरण प्रस्तुत किया जाता है तथा प्रदत्तों के निर्वचन के लिये गुणात्मक अनुसन्धानों में तीन प्रकार की विश्लेषण तकनीकों को प्रयोग किया जा सकता है–

(i) विषय–वस्तु विश्लेषण तकनीक

(ii) निगमनात्मक विश्लेषण तथा

(iii) तार्किक विश्लेषण

इन तीनों तकनीकों में विषयवस्तु विश्लेषण तकनीक का प्रयोग व्यवहारिक विज्ञानों में इस तकनीक की विशेषताओं के आधार पर बहुतायत से किया जाता है। निगमनात्मक विश्लेषण मानवशास्त्र में ज्यादा प्रयुक्त की जाती है जबकि तार्किक विश्लेषण का प्रयोग क्रास अध्ययनों में उपयोगी है। इसलिये महत्ता की दृष्टि से विषय वस्तु विश्लेषण को समझना ज्यादा आवश्यक है।

विषयवस्तु विश्लेषण तकनीक (Content Analysis Technique)

विषयवस्तु विश्लेषण को दस्तावेज विश्लेषण के नाम से भी पुकारा जाता है। इसमें शोधकर्ता अध्ययन किये जाने वाली घटना या व्यक्ति के सम्बन्ध में साक्षात्कार, प्रेक्षण या प्रश्नावली से प्राप्त विचारों को एकत्रित नहीं करता बल्कि ऐसी घटनाओं या व्यक्तियों द्वारा किये गये संचारों (communication) या उनके व्यवहारों के बारे में एकत्रित किये गये दस्तावेजों का विश्लेषण कर निष्कर्ष पर पहुँचता है। विषयवस्तु विश्लेषण को परिभाषित करते हुए **करलिंगर (Kerlinger)** ने कहा है ''विषयवस्तु विश्लेषण चरों को मापने के लिये संचारों का एक क्रमबद्ध, वस्तुनिष्ठ तथा परिभाषात्मक ढंग से विश्लेषण एवं अध्ययन करने की एक विधि हैं।''

हालस्टी (Holsti) के अनुसार ''विषयवस्तु विश्लेषण सूचनाओं के विशिष्ट गुणों को क्रमबद्ध एवं वस्तुनिष्ठ ढ़ंग से पहचान करते हुये अनुमान लगाने की एक विधि है।''

बेरेलसन (Berelson) ने भी विषयवस्तु विश्लेषण को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है–''विषयवस्तु विश्लेषण संचारों की विषयवस्तु में सन्निहित वस्तुनिष्ठ, व्यवस्थित तथा परिमाणात्मक विवरण देने की एक शोध प्रविधि है।''

उपरोक्त से स्पष्ट है कि विषयवस्तु विश्लेषण–

(i) एक ऐसी प्रविधि है जिसमें संचार में निहित तथ्यों या विशेषताओं को पृथककर उसे अनुसन्धान प्रदत्त के रूप में तैयार किया जाता है।

(ii) यह एक वैज्ञानिक प्रविधि है।

(iii) इसमें व्यक्त एवं अव्यक्त दोनों तरह के विषयवस्तु का विश्लेषण किया जाता है।

विषयवस्तु विश्लेषण के उद्देश्य –

विषयवस्तु विश्लेषण में प्रदत्तों के प्राथमिक स्रोतों में पत्र, पत्रिकायें, जनरल, आत्मकथा, डायरी, किताब, पाठयक्रम, न्यायालय के निर्णय, तस्वीर, फिल्म, कार्टून, आदि प्रमुख है। शोधार्थी इन स्रोतों से प्राप्त प्रदत्तों की विश्वसनीयता

की परख करता है तब उनका उपयोग करता है। इस तकनीक के कुछ विशेष उद्देश्य होते हैं। जो निम्न है–

(i) वर्तमान परिस्थितियों एवं प्रचलनों का वर्णन करना तथा उनकी व्याख्या करना।

(ii) लेखक के संप्रत्ययों, विश्वास, चिन्तन एवं उनकी लेखन शैली को जानना।

(iii) किसी घटना या प्रतिफल से सम्बन्धित विभिन्न कारकों को पहचानना एवं उनकी व्याख्या करना।

(iv) ऐसे विभिन्न संकेतों का विश्लेषण करना जिनसे विभिन्न संस्थाओं देशों या अन्य विचार धाराओं का प्रतिनिधित्व होता है।

(v) पाठ्य पुस्तकों या अन्य एक जैसी पुस्तकों की प्रस्तुतीकरण की कठिनाई स्तर की पहचान करना।

(vi) छात्रों के कार्यों में विभिन्न तरह की त्रुटियों को विश्लेषण करना।

(vii) किसी पाठ्य वस्तु की प्रस्तुति में सम्बन्धित प्रचार एवं पूर्वाग्रह का मूल्यांकन करना।

(viii) विभिन्न विषयों या सस्याओं के तुलनात्मक महत्व को जानना।

विषयवस्तु विश्लेषण की प्रक्रिया –

विषयवस्तु विश्लेषण की प्रक्रिया को मूलतः तीन भागों में बॉटा जा सकता है–

(1) समष्टि को परिभाषित तथा वर्गीकृत करना –

विषयवस्तु विश्लेषण में सर्वप्रथम समष्टि को ठीक प्रकार से परिभाषित किया जाता है तथा उसका उपयुक्त ढ़ंग से वर्गीकरण किया जाता है। शोधकर्त्ता द्वारा जिस विषयवस्तु का विश्लेषण करना है, उसे स्पष्ट शब्दों में परिभाषित करके उसे पुनः छोटे–छोटे भागों में विभक्त कर दिया जाता है। उदाहरण के लिये कक्षा अनुशासन पर शिक्षक द्वारा दिखलाई गयी सख्ती के अनुशासन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने के लिये शोधकर्ता वर्ग अनुशासन को चार महत्वपूर्ण श्रेणियों समय निष्ठा, ध्यान, पाठ बनाना तथा साथियों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार में कमी में बॉट सकता है। इससे शोधकर्ता को परिकल्पना बनाना सरल हो जाता है।

(2) विश्लेषण की इकाई –

विषयवस्तु विश्लेषण में एक महत्वपूर्ण कदम इकाई के रूप में विश्लेषण करना होता है। इन इकाइयों का सम्बन्ध सामग्री के संरचनात्मक पक्ष से होता है।

इकाई से तात्पर्य सामग्री का एक विशिष्ट संरचनात्मक अंश या भाग से होता है जिसे एक पद या एकांश समझकर किसी वर्ग के अन्तर्गत स्थान दिया जाता है।

बेरेलसन ने इन इकाईयों को पाँच भागो में बाँटा है–

(i) शब्द (Words) -

शब्द विश्लेषण की सबसे छोटी इकाई हेाती है, परन्तु कभी–कभी इससे भी छोटी इकाई अक्षर का भी प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिये कोई शोधार्थी विद्यार्थियों की बोधशक्ति तथा शब्दों के स्वरूप के बीच के सम्बन्ध को जानना चाहता है तो वह शब्द को विश्लेषण की इकाई मानकर शब्दों केा तीन भागों –आसान, साधारण तथा कठिन में बाँट सकता है। इस प्रकार से वह अपनी सूची के प्रत्येक शब्द को तीन भागों में बाँटकर तथा उन्हें छात्रों केा देकर उनकी बोध शक्ति का अध्ययन कर सकता है।

(ii) विषय (Theme) -

विश्लेषण की दूसरी इकाई विषय है जो प्रायः एक वाक्य या एक प्रस्ताव के रूप में होता है।

(iii) एकांश (Item) -

किसी दिये हुये उद्दीपन के प्रति प्रयोज्य द्वारा की गयी सम्पूर्ण अनुक्रिया को ही एकांश कहा जाता है। जैसे प्रयोज्य द्वारा किसी चित्र को देखकर एक कहानी लिखना या लघु आत्मकथा या लघु रेडियो कार्यक्रम या लघु दूरदर्शन कार्यक्रम केा विश्लेषण के एकांश के रूप में लिया जाता है।

(iv) स्वलक्षण (Character) -

स्वलक्षण से तात्पर्य साहित्यिक रचना में किसी व्यक्ति या पात्र से होता है तथा इस इकाई का प्रयोग लघु कहानियों के विश्लेषण में किया जाता है। इसीलिये साहित्यिक शोध के क्षेत्र में स्वलक्षण इकाई का प्रयोग ज्यादा किया जाता है।

(v) दिक्काल मापदण्ड (Space and time measures) -

इस इकाई का प्रयोग सामान्यतः मनोविज्ञान या शिक्षा के अनुसन्धानों में नहीं होता। यह ऐसी इकाई होती है जिसमें वस्तु का भौतिक माप किया जाता है। जैसे– दो वस्तुओं के बीच की दूरी को इंच की संख्या से व्यक्त करना, पेज संख्या, विचार विमर्श का समय, पैराग्राफ की संख्या आदि। इसका प्रयोग प्राकृतिक विज्ञानों में ज्यादा किया जाता है।

(3) परिमाणन (Quantification) –

विषयवस्तु विश्लेषण का तीसरा भाग परिमाणन है। परिमाणन से आशय

विषयवस्तु विश्लेषण की वस्तुओं को अंक प्रदान करने की प्रक्रिया से होता है। उदाहरण के लिये किसी लेख के विश्लेषण में कहा जाये कि इसमें 4 पेज या 10 पैराग्राफ हे। परिमाणन की प्रक्रिया को सामान्यतः तीन प्रकार से किया जाता है। नामित मापन, क्रमिक मापन तथा रेंटिंग मापन।

विषयवस्तु विश्लेषण के लाभ –

विषयवस्तु विश्लेषण के निम्न लाभ हैं –

(i) इस विधि का कार्यक्षेत्र व्यापक है जिससे इसे विभिन्न तरह की सामग्रियों के अध्ययन में सरलता से प्रयुक्त किया जा सकता है।

(ii) विषयवस्तु विश्लेषण का प्रयोग आश्रित चर पर किसी प्रयोगात्मक हस्तक्षेप के पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन जैसी परिस्थितियों में भी किया जा सकता है।

(iii) विषयवस्तु विश्लेषण का प्रयोग प्रेक्षण की अन्य विधियों से प्राप्त प्रदत्तों की वैधता ज्ञात करने में किया जा सकता है।

(iv) सामाजिक संस्कृति के क्रमिक विकास के अध्ययन में प्रयोग

(v) विभिन्न संस्कृतियों के तुलनात्मक अध्ययन में प्रयोग

विषय वस्तु विश्लेषण की सीमायें :–

उपरोक्त लाभों के बावजूद इसकी कुछ परिसीमायें भी है जो निम्नवत है–

(i) इस विधि से प्राप्त प्रदत्त अधिक विश्वसनीय नही होते तथा निष्कर्षो पर विभिन्न अनुसन्धानकर्ताओं में भी सहमति नहीं होती।

(ii) विषयवस्तु विश्लेषण में निष्कर्षो के सामान्यीकरण की समस्या होती है।

(iii) इस विधि में शोधकर्ता का अपना पूर्वाग्रह, विश्वास एवं स्थिराकृति आदि का विश्लेषण करते समय प्रभाव पड़ता है जिससे आत्मनिष्ठता उत्पन्न हो जाती है।

(iv) इस विधि का कार्य क्षेत्र सीमित होता है, क्योंकि जिन व्यक्तियों के लेख, दस्तावेज आदि किसी कारण उपलब्ध नहीं होते तो उनका विषयवस्तु विश्लेषण नहीं किया जा सकता।

(v) इस विधि में सामान्यतः समय एवं श्रम अधिक लगता है।

बोध प्रश्न :–

1. गुणात्मक अनुसन्धान में प्रदत्त विश्लेषण की कौन–कौन सी तकनीकें हैं?

.....

.....

.....

2. विषयवस्तु विश्लेषण से क्या तात्पर्य है ?

.....

.....

.....

8.9 सारांश

इस इकाई में गुणात्मक अनुसन्धान के अर्थ, विशेषताओं, उद्देश्य एवं महत्व की चर्चा की गयी है। गुणात्मक अनुसन्धान के विभिन्न प्रकारों के साथ–साथ प्रदत्त संग्रह के उपकरण एवं प्रदत्त विश्लेषण की तकनीकों को भी स्पष्ट किया गया है। सारांश रूप में कहा जा सकता है कि गुणात्मक अनुसन्धान शैक्षिक क्षेत्र में अनुसन्धान का एक महत्वपूर्ण प्रकार है जिसमें सीमित जनसंख्या, असंभाविक न्यायदर्शन, तथा विशिष्ट उपकरणों की सहायता से गहन अध्ययन किया जाता है। गुणात्मक अनुसन्धान के लिये विभिन्न पद जैसे नृशास्त्रीय अध्ययन, व्यष्टि अध्ययन, घटना–क्रिया विज्ञानपरक अध्ययन आदि का प्रयोग किया जाता है। गुणात्मक अनुसन्धानों में प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए विषयवस्तु विश्लेषण एक मुख्य तकनीक है। विषय वस्तु विश्लेषण में सूचनाओं के विशिष्ट गुणों को क्रमबद्ध एवं वस्तुनिष्ठ ढ़ंग से पहचान करते हुये अनुमान लगाये जाते हैं। विषयवस्तु विश्लेषण के विभिन्न लाभ हैं लेकिन इसकी सीमायें भी है। जिनको इस इकाई में स्पष्ट किया गया है।

8.10 अभ्यास प्रश्न

1. गुणात्मक अनुसन्धान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिये।
2. अनुसन्धान के क्षेत्र में गुणात्मक अनुसन्धान का क्या महत्व है ?
3. गुणात्मक अनुसन्धान के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये।
4. गुणात्मक अनुसन्धान में प्रदत्त संग्रह के कौन–कौन से उपकरण हैं ?
5. गुणात्मक अनुसन्धान में विषयवस्तु विश्लेषण तकनीक की प्रक्रिया को बताइये।

8.11 चर्चा के बिन्दु

इस इकाई में गुणात्मक अनुसन्धान के अर्थ, विशेषतायें एंव महत्व से यह

जांचा कि यह एक महत्वपूर्ण अनुसन्धान विधि है। बावजूद इसके शैक्षिक क्षेत्र में गुणात्मक अनुसन्धान, मात्रात्मक अनुसन्धान के सापेक्ष कम हेाते हैं क्यों ? गुणात्मक अनुसन्धान सिद्वान्तों के निरूपण में सहायक होते हैं। शैक्षिक क्षेत्र में नवीन सिद्धान्तों की आवश्यकता होते हुए भी सार्थक प्रयासों का अभाव दिखाई पड़ता है। ऐसा क्यों ? इन्हें कैसे बढ़ाया जा सकता है ?

4.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Patton, N. Q (1990) : "Qualitative Evaluation and Research Method," Newburg Park, Colif ; Sage Publications.

Best, John W & Kahn : "Research in Education" Seventh Edition, Prentice Hall of

Jamess (1995) India Private Ltd. New Delhi.

Koul, Lokesh (2003) : "Methodology of Educational Research" Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.

सिंह, अरूण कुमार (2009) : ''मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ'' मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली।